Chap-1

प्रथम अध्याय

: विषय-प्रवेश :

प्रास्ताविक : ---

कहानी का मनुष्य के जीवन के साथ प्रारंभ से ही रागात्मक संबंध रहा है । शिशु अवस्था में बच्चे का परिचय सबसे पहले कहानी से होता है । अपने बचपन में सभी ने अपने माता - पिता , दादा- दादी , नाना - नानी या चाचा - ताऊ से कहानियां सुनी होंगी । कहानी में एक प्रकार का कथारस पाया जाता है । उसमें निरंतर जिज्ञासा या कुतूहल का भाव विद्यमान रहता है । कहानी का श्रोता यह जानना चाहता है कि आगे क्या होगा । यदि कहानी से यह तत्व लुप्त हो जाय तो कहानी का अस्तित्व ही नहीं रहेगा । प्रस्तुत शोध-प्रबंध में प्रेमचन्द जी तथा शैलेश मटियानी जी की कहानियों को केन्द्र में रखते हुए दलित-जीवन की कतिपय समस्याओं पर विचार - विमर्श करने का उपक्रम है ।

कहानी तो हमारे यहाँ प्राचीन काल से मिलती है । पंचतंत्र , हितोपदेश , कथासरितसागर , बत्तीस पुतलियों की कथा , वैताल कथाएं , बौद्ध जातक-कथाएं तथा रामायण - महाभारत एवं अन्य पुराणों

में हमें सहस्त्राधिक कहानियां उपलब्ध होती हैं। परंतु यहाँ इस तथ्य को गौरतलब करना होगा कि उपर्युक्त कहानियों में तथा जिसे आज कहानी कहा जाता है, उनमें विषय - वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से तात्विक अंतर पाया जाता है। प्राचीन कथा स्थूलकथावस्तुप्रधान , मनोरंजनप्रधान, बोधप्रधान तथा कथासूत्रों Story - Motif) पर आधारित होती थीं , जबकि आधुनिक कहानी अधिक सूक्ष्म , चरित्र - चित्रणप्रधान , परिवेशप्रधान तथा जीवन के प्राण - प्रश्नों से संपृक्त होती हैं। हमारा समसामयिक जीवन ही आधुनिक कहानी की पृष्ठभूमि को तैयार करता है।

एक अन्य मुद्दा जो यहाँ प्रस्तुत है , वह है दलित जीवन। हमारे देश में वर्णव्यवस्था के कारण कुछ जाति- समूहों को बहुत ही उपेक्षित रखा गया है। समाज ने उनके साथ खूब अन्याय किया है। यहाँ तक कि उनको अस्पृश्य माना गया है। उन्हें तरह - तरह से लांछित और अपमानित किया गया तथा मानव - अधिकारों से वंचित रखा गया। इन जाति - समूहों में अछूत कही जाने वाली जातियाँ , आदिवासी तथा कुछ पिछड़ी जातियों को लिया जाता है। अछूतों के लिए पहले हरिजन शब्द प्रचलित था , परंतु अब उसे असंसदीय करार दिया गया है। अतः उल्लिखित जातियों के लिए इस प्रबंध में सर्वत्र दलित शब्द का ही प्रयोग किया गया है।

हिन्दी कहानी :---

ऊपर निर्दिष्ट किया जा चुका है कि कहानी से मनुष्य का परिचय तो प्राचीन काल से है, परंतु जिसे आज कहानी , कथा या आख्यायिका कहा जाता है, वह आधुनिक काल के नवजागरण की देन है। नवजागरण के कारण हिन्दी गद्य तथा पत्र - पत्रिकाओं का विकास हुआ। पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन ने कहानी के विकास में बड़ा महत्वपूर्ण योगदान दिया।

कहानी की परिगणना कथा-साहित्य के अन्तर्गत होती है और

कथा - साहित्य में उपन्यास और कहानी उभय का समावेश होता है। दोनों में जीवन और जगत की उन समस्याओं को केन्द्रस्थ किया गया है जिनका सरोकार मानवीय जीवन और मानवीय जीवन-मूल्यों से है। परन्तु उपन्यास का फलक विस्तृत होता है। उसमें जीवन और जगत की अनेकों घटनाएं और समस्याएं रहती हैं; वहां कहानी जीवन के किसी मार्मिक प्रसंग को लेकर चलती है। इस दृष्टि से कहानी एकांकी के निकट पड़ती है। जिस प्रकार एकांकी में एक घटना , एक भाव , एक विचार , एक चोट को लक्षित किया जाता है ; ठीक उसी प्रकार कहानी में भी किसी एक मार्मिक प्रभाव को लक्षित किया जाता है। आधुनिक कहानी के पुरोधाओं में से एक ऐसे आंग्ल लेखक एडगर एलन पो ने कहानी के संदर्भ में लिखा है : " A short story is narrative short enough to be read in a single sitting, written to make an impression on the reader , excluding all that does not Forward that impression complete and Final in itself."

अर्थात् कहानी इतनी संक्षिप्त होती है कि उसे एक बैठक में पढ़ सकते हैं। वह पाठक के मस्तिष्क पर एक प्रभाव उत्पन्न करने के उद्देश्य से लिखी जाती है, और उसमें से उन तमाम चीजों को बहिष्कृत किया जाता है , जो उस मूलभूत प्रभाव को पैदा करने में बाधक सिद्ध होती हैं। कहानी अपने आप में पूर्ण हाती है।

उपर्युक्त कथन से प्रमाणित होता कि कहानी का लक्ष्य निर्धारित होता है और लेखक उस निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अपनी समूची रचनात्मक शक्ति को लगा देता है। इस दृष्टि से विचार करें तो कहानीकार की दृष्टि महाभारत के धनुर्धारी अर्जुन की दृष्टि है , जिसे वृक्ष पर स्थित पक्षी की आंख मात्र दिखती है। दूसरी तरफ उपन्यासकार की दृष्टि को हम भीम - दृष्टि कह सकते हैं , जिसे पक्षी के अलावा भी बहुत-सी चीजें दिखती हैं।

उपन्यास और कहानी दोनों में तत्वों की भी समानता है। दोनों में निम्नलिखित छः तत्व आलोचकों ने माने हैं --- कथावस्तु, चरित्र - चित्रण, कथोपकथन, देशकाल, विचार और उद्देश्य तथा भाषा - शैली। उपन्यास में उक्त सभी छः तत्व कमोबेश रूप में मिलते हैं, जबकि कहानी में प्रधानता उनमें से किसी एक तत्व की रहती है। दोनों कथा - साहित्य के प्रकार हैं और दोनों के केन्द्र में कथा है; परन्तु केवल इतने मात्र से कोई उपन्यास को बड़ी कथा और कहानी को छोटी कथा नहीं कह सकता। इसको समझाते हुए बाबू गुलाबराय ने कहा है कि बैल और मेढ़क दोनों चौपाये होते हैं, लेकिन केवल चौपाये होने के आधार पर हम बैल को बड़ा मेढ़क और मेढ़क को छोटा बैल नहीं कह सकते।[२]

वस्तुतः दोनों की प्रवृत्ति, प्रकृति और प्रक्रिया में अन्तर है। वृषभ चारों पैरों पर समान बल देते हुए चलता है, जब कि मेढ़क फुदक - फुदक कर चलता है। ठीक यही बात उपन्यास और कहानी पर लागू होती है। उपन्यासकार मंथर गति से आगे बढ़ते है, जबकि कहानीकार बीच - बीच में बहुत-सी जमीन छोड़ते हुए चलता है।

यदि आधुनिक उपकरणों से तुलना करें तो उपन्यास की तुलना हम किसी विडियो-कैसेट से कर सकते हैं; तो कहानी की तुलना "स्नेप - शोट" से। कहानी में कथा का तत्व तो रहता ही है, परन्तु इधर आधुनिक कहानियों में कहीं-कहीं यह तत्व अति सूक्ष्म और क्षीण होता गया है। अब कहानी एक वस्तु-स्थिति, भाव-स्थिति या परिवेश-चित्रण तक सीमित हो गई है। हिन्दी कहानी ने "आदि, मध्य और अंत" वाले ढांचे को भी तोड़ा है। हिन्दी कहानी में अब चमत्कारिक, कुतूहलवृद्धक आरंभ और अंत की विभावना को भी नकार दिया गया है। कहानीकार कभी-कभी पाठक को "डेड-एण्ड" पर लाकर छोड़ देता है। किसी एक निश्चित परिणाम तक न ले जाकर, ऐसे स्थान पर कहानी समाप्त हो जाती है, जिसमें उसके अन्त को लेकर अनेकानेक

संभावनाओं की गुंजाइस रहती है । कहानी के बाद पाठक के मन-मस्तिष्क में एक दूसरी कहानी शुरू हो जाती है ।

हिन्दी कहानी का विकास :---

यद्यपि हमारे यहाँ कथा की प्राचीन परंपरा मिलती है , तथापि आधुनिक कलात्मक कहानी का आरंभ तो नवजागरण पश्चात् भारतेन्दु युग से ही माना जाता है । भारतेन्दु युग में कहानियों के नाम पर कतिपय कहानी - संग्रह उपलब्ध होते हैं , जिनमें मुंशी नवल - किशोर द्वारा संपादित ''मनोहर कहानी'' सन् १८८० ; अम्बिकादत्त व्यास कृत ''कथा - कुसुम - कलिका'' सन् १८८८; राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द कृत ''वामा मनोरंजन'' सन् १८६८ ; और चण्डीप्रसाद कृत ''हास्य रतन'' सन् १८८६ आदि मुख्य हैं । मनोहर कहानी में कुल १०० कहानियां संकलित हैं । इन कहानी - संग्रहो में संकलित कहानियों में लोक - प्रचलित , इतिहास - पुराण कथित या शिक्षा - नीति या हास्य विषयक कथाएं उपलब्ध होती हैं । इन कहानियों को या तो तत्कालीन लेखकों ने स्वयं लिखकर या किसी अन्य से लिखवा कर प्रकाशित करवाया है । इस समय कहानी के नाम पर कुछ स्वप्न कथाएं भी मिलती हैं , जिनका रूपबंध कुछ - कुछ कथात्मक निबंधों जैसा है । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और बाल कृष्ण भट्ट की स्वप्न - कथाएं कहानी और निबंध की सीमाओं को स्पर्श करती हुई दृष्टिगोचर होती हैं । [३]

आर्चाय रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा हैं --- ''अंग्रेजी की मासिक पत्रिकाओं में जैसी छोटी-छोटी आख्यायिकाएं या कहानियां निकला करती हैं , वैसी कहानियों की रचना ''गल्प'' के नाम से बंगभाषा में चल पड़ी थीं । ये कहानियां जीवन के बड़े मार्मिक और भावव्यंजक खण्डचित्रों के रूप में होती थीं । द्वितीय उत्थान की सारी प्रवृत्तियों का आभास लेकर प्रकट होने वाली ''सरस्वती'' पत्रिका में इस

प्रकार की छोटी कहानियों के दर्शन होने लगे।''[४] अभिप्राय यह कि ''सरस्वती'' पत्रिका के प्रकाशन के उपरान्त ही हिन्दी में कलात्मक कहानियों का उदय हुआ।

यद्यपि यह कहना तो कठिन है कि जिसे आज हिन्दी में कहानी के नाम से अभिहित किया जाता है उसकी प्रथम रचना किसने की। परन्तु इतना तो असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि इस विधा के उद्‌भव और प्रसार में ''सरस्वती'' पत्रिका का बहुत बड़ा योगदान है। ''सरस्वती'' पत्रिका का प्रकाशन सन् १९०० में हुआ था। अतः इसे हम कहानी के विकास का प्रारंभिक बिन्दु मान सकते हैं। हिन्दी कहानी के आरंभिक लेखकों में किशोरीलाल गोस्वामी, गिरिजाकुमार घोष (पार्वतीनंदन), माधव प्रसाद मिश्र, लाला भगवानदीन , आचार्य रामचन्द्र शुक्ल , बंग महिला प्रभृति की गणना कर सकते हैं।[५]

पंडित किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी ''इन्दुमती'' सन् १९०० में ''सरस्वती'' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। परन्तु यह कहानी शेक्सपियर के ''टेम्पेस्ट'' नाटक के आधार पर लिखी गई है, अतः उसे मौलिक नहीं माना जा सकता। गिरिजाकुमार घोष (पार्वतीनंदन) की कहानियां बंगला से अनुवादित हैं। माधवप्रसाद मिश्र द्वारा प्रणीत कहानी ''मन की चंचलता'' सुदर्शन पत्रिका में सन् १९०० के आसपास प्रकाशित हुई। लाला भगवानदीन की कहानी ''प्लेग की चुड़ैल '' वास्तविक परिस्थिति पर आधारित है , जो सन् १९०२ में ''सरस्वती '' पत्रिका में प्रकट हुई थी। इसी पत्रिका में ही आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की ''ग्यारह वर्ष का समय ''तथा बंगमहिला की ''दुलाई वाली'' कहानी क्रमशः सन् १९०३ तथा १९०७ में प्रकाशित हुई थी।[६] इनको हम हिन्दी के प्रारंभिक कहानीकारों में परिगणित कर सकते है।

सन् १९०९ में काशी में ''इन्दु'' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस पत्रिका ने हिन्दी कहानी को गति प्रदान करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसमें जयशंकर प्रसाद तथा राजा

राधिकारमणप्रसादसिंह की भावात्मक कहानियां प्रकट होने लगीं। प्रसादजी की प्रथम कहानी ''ग्राम'' इसमें सन् १९१० में प्रकाशित हुई थी।[७] इसके तीन वर्ष बाद सन् १९१३ में राजा राधिकारमणप्रसादसिंह की कहानी ''कानों में कंगना'' प्रकाशित हुई। प्रसादजी की इस समय की कहानियों में ''आकाशदीप'', ''पुरस्कार'', ''प्रतिध्वनी'', ''चित्रमंदिर'' आदि विशेष चर्चित रही हैं। प्रसादजी का एक कहानी - संग्रह ''छाया'' नाम से सन् १९१२ में ही प्रकाशित हो गया था। प्रसादजी की कहानियों में हमें प्राचीन भारत की मनोरम आभा के साथ - साथ सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक का चित्रण भी उपलब्ध होता है।

हिन्दी कहानी का एक प्रतिमान --- ''उसने कहा था'' --- कहानी का प्रकाशन ''सरस्वती'' पत्रिका में ही सन् १९१५ में हुआ था। इसे हम हिन्दी कहानी-साहित्य की एक ''सदाबहार'' कहानी कह सकते हैं। हिन्दी कहानियों का शायद ही कोई ऐसा कहानी संग्रह होगा, जिसमें यह कहानी संग्रहीत न हुई होगी। ''पहले महायुद्ध की पृष्ठभूमि को लेकर लिखी गयी यह कहानी रचनाशिल्प की दृष्टि से अपने समय से बहुत आगे की रचना है। आधुनिक हिन्दी कहानी का आरंभ यहीं से मान्य होना चाहिए।''

इसी समय सन् १९०९ में वृन्दावनलाल वर्मा ने ''राखीबन्द भाई'' शीर्षक कहानी लिखकर ऐतिहासिक कहानियों का सूत्रपात किया।[९] जब हिन्दी में कहानी को लेकर उक्त प्रवृत्तियां चल रही थीं, तब ''नवाबराय'' नाम से प्रेमचन्द की कई कहानियां उर्दू पत्रिका ''ज़माना'' में प्रकाशित हो चुकी थी। बाद में ''उर्दू में अधिक यश और धन-प्राप्ति की संभावना न देखकर वे हिन्दी की ओर उन्मुख होने लगे थे।''[१०] ''सरस्वती'' में उनकी जो कहानियां प्रकाशित हुई वे इस प्रकार हैं -- सौत (१९१५), पंच परमेश्वर (१९१६), सज्जनता का दण्ड (१९१६), ईश्वरीय न्याय (१९१७) और दुर्गा का मंदिर (१९१७)।[११]

हिन्दी कहानी : प्रेमचन्द युग सन् १९१८ - १९३६ : ---

सन् १९१८ के बाद तो प्रेमचन्दजी की कहानियां बहुतायत से प्रकाश में आने लगीं। स्वयं प्रेमचन्दजी "हंस" और "जागरण" जैसी पत्रिकाओं के माध्यम से कहानी - मंजूषा को समृद्ध करने का कार्य प्रारंभ कर रहे थे। उस समय वास्तवदर्शी समस्यामूलक कहानियों को लेकर जिस "बृहत्त्रयी" का उल्लेख मिलता है, उसमें तीन लेखक हैं --- विश्ववम्भरनाथ शर्मा "कौशिक", सुदर्शन और प्रेमचन्द।[१२] कौशिक जी की कहानियों में शहरी जीवन के कुछ अच्छे चित्र उपलब्ध होते हैं। सुदर्शन जी शहरी मध्यवर्ग के प्रतिनिधि लेखक कहे जा सकते हैं। उनकी कहानियों में राजनीतिक आंदोलनों के भी कतिपय सूत्र मिलते हैं। उनकी "न्याय-मंत्री" शीर्षक कहानी ऐतिहासिक वृतान्त पर आधारित है। "हार में जीत" शीर्षक कहानी पर्याप्त चर्चित रही है और गुलेरजी की "उसने कहा था" कहानी की भांति यह कहानी भी प्रायः अधिकांश कहानी-संग्रहों में दृष्टिगोचर होती है।

इस कालखण्ड में प्रमुखतया कहानी के क्षेत्र में हमें दो प्रवृत्तियां उपलब्ध होती हैं। "प्रेमचन्द जीवन की वास्तविक घटनाओं और समस्याओं को लेकर आदर्श की प्रतिष्ठा कर रहे थे, जबकि प्रसाद मनुष्य के भीतरी भावद्वन्द्व को व्यक्त करने में लीन थे। प्रेमचन्द मुख्यतः वर्तमान के दुःख - दर्द, हार - जीत, और न्याय - अन्याय की कहानी कह रहे थे, जबकि प्रसाद अतीत में कल्पना के सहारे रम रहे थे। प्रेमचन्द उर्दू से हिन्दी में आये थे। उनकी भाषा बोलचाल की मुहावरेदार, चुस्त और सजीव भाषा थी। इसके विपरीत प्रसाद काव्यमयी अलंकृत तत्समप्रधान भाषा लिखते थे। इन दोनों ने तत्कालीन लेखकों को पर्याप्त रूप से प्रभावित किया। आगे चलकर प्रसाद काव्य और नाटक के क्षेत्र में रम गये। कहानी के क्षेत्र में प्रेमचंद का स्थान अन्यतम रहा। कालान्तर में हिन्दी कहानी में विकसित होने वाली सभी प्रवृत्तियों का उद्भव-स्रोत यहीं

लक्षित होता है। व्यक्ति को केन्द्र में रखकर लिखी जाने वाली कहानियों का उद्भव प्रसाद से और समाज के व्यापक हितों को दृष्टि में रखकर लिखी जाने वाली कहानियों का उद्भव - स्रोत प्रेमचन्द से स्वीकार किया जाना चाहिए।''[१३]

प्रेमचन्द ने न केवल हिन्दी उपन्यास - साहित्य और कहानी साहित्य को समृद्ध किया , प्रत्युत उन्होंने एक युग का निर्माण किया , अनेक लेखकों को लिखने के लिए प्रेरित किया और इस प्रकार हिन्दी कहानी को गतिशीलता प्रदान करते हुए उसे भारतीय एवं विश्वसाहित्य में प्रतिष्ठित किया। प्रेमचन्दजी का लेखन सोद्देश्य कला-मूल्यों को अग्रसरित करता है। सामाजिक मूल्यों के प्रति उनमें एक विशेष प्रकार की प्रतिबद्धता पायी जाती है। उनकी कहानियों का लक्ष्य मानव - चरित्रों को उजागर करने के साथ-साथ सामाजिक क्रान्ति की भूमिका को स्थापित करने का भी रहा है। अतः उनकी कहानियां रोमांचक , साहसिक , स्थूल घटनाप्रधाान और कौतुहलवर्द्धक न होकर समाज के प्राण - प्रश्नो को उपस्थित करने वाली हैं। प्रेमचन्द की कहानी - कला के सन्दर्भ में डा. पारूकान्त देसाई का निम्नलिखित कथन ध्यातव्य रहेगा ---

''मानवीय संवेदना प्रेमचन्द की कहानी का प्राणतत्व है। प्रेमचन्दजी ने जो तीन सौ के लगभग कहानियां लिखी हैं , उनमें हमें वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र मिलते हैं , क्योंकि प्रेमचन्दजी अपने कथा - साहित्य के पात्र पुस्तकों से न लेकर इस दृश्यमान जगत से लेते हैं। ... समाज के कटु यथार्थ को निरूपित करने वाली उनकी जो कहानियां हैं उनमें मानव - चरित्र का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक निरीक्षण मिलता है। प्रेमचन्द का युग नवजागरण , समाज - सुधार , राष्ट्रीय - चेतना और रूढ़ि - विरोध का युग था। अतः उनकी कहानियों का विषय भी उसी के अनुरूप होते हैं। अनमेल विवाह , दहेज - प्रथा , वेश्याप्रवृत्ति, नारी की आर्थिक पराधीनता , नारी का समाज में नैतिक शोषण, नारी - शिक्षा , अंध - विश्वास , साम्प्रदायिकता , राष्ट्रीयता आदि अनेक विषयों पर

प्रेमचन्दजी ने अपनी कलम चलायी है। कलाकार की निजी पूंजी उसका दर्द होता है और प्रेमचन्दजी ने अपनी सभी कहानियों में मानवीय दर्द को उभारने का प्रयत्न किया है। कला की दृष्टि से प्रेमचन्दजी की कहानियां मोपांसां के करीब पड़ती हैं।''[१४]

प्रेमचन्दजी की कहानियों में सामाजिक - राजनीतिक जागरूकता एवं कलागत निरपेक्षता का अद्भुत संतुलन मिलता है। उनकी चर्चित कहानियों में ''सवा सेर गेहूं'', ''शंखनाद'', ''बड़े घर की बेटी'', ''नमक का दारोगा'', ''मंत्र'', ''ईदगाह'', ''पूस की रात'', ''शतरंज के खिलाड़ी'', ''ठाकुर का कुआं'', ''सद्गति'', ''पचं परमेश्वर'', ''दो बैलों की कथा'' प्रभृति की गणना हम कर सकते हैं। प्रारंभ में विचारधारा की दृष्टि से वे आदर्शवादी थे, परन्तु क्रमशः आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से होते हुए वे यथार्थवाद की ओर गतिशील होते हैं। प्रेमचन्दजी का लेखन व चिंतन निरंतर गतिशील रहा है। शुरू में वे आर्यसमाज से अधिक प्रभावित थे, बाद में गांधीवाद की ओर आकृष्ट हुए और अन्त में उनकी रूझान मार्क्सवाद की ओर हो चली थी उसके संकेत हमें उनके परवर्ती उपन्यासों, कहानियों और लेखों में मिलते हैं। इस संदर्भ में उनका ''महाजनी सभ्यता'' विषयक निबंध पठनीय कहा जा सकता है।

प्रेमचन्दजी ग्राम्य परिवेश के चरित्रों और दृश्यों को उपस्थित करने में सिद्धहस्त लेखक माने जाते हैं। उनकी कहानियों में हमें भारत के, विशेषतः उत्तर भारत के, सामान्य मनुष्य की प्रतिष्ठा दृष्टिगोचर होती है। साधारण से साधारण मनुष्य में वे कई बार उच्चातिउच्च मानवीय गुणों का निदर्शन करते हैं। ''पंच परमेश्वर'' कहानी में उन्होंने सामाजिक पद के उत्तरदायित्व को अत्यन्त सहज - सरल ढंग से प्रस्तुत किया है, तो ''बड़े घर की बेटी'' में बड़े घर की बेटी अपने अच्छे - बुरे दोनों अर्थों में अपने नाम को सार्थक करती है। देवर और पति के बीच में लड़ाई का कारण बनती हुई परिवार को विभाजन के कगार पर खड़ा करने वाली ''बड़े घर की बेटी'' अन्ततः उन दो भाइयों में मेल कराकर परिवार को

बचा लेती है और इस प्रकार अपने हृदय की विशालता और मानवता का परिचय देती है। ''शतरंज के खिलाड़ी '' कहानी में प्रेमचन्दजी का सूक्ष्म व्यंग्य दृष्टिगोचर होता है। इसमें प्रेमचन्दजी ने यह भलीभांति दिग्दर्शित किया है कि किस प्रकार देश का सामंत वर्ग -- राजा - महाराजा , सामंत - सरदार , नवाब, जमींदार इत्यादि -- विलासिता और काहिली में डूबा हुआ था और ब्रिटिश शासक एक के बाद एक देश के विभिन्न सूबों को हस्तगत करते जा रहे थे। मीर और मिर्जा के प्रतीकात्मक चरित्रों के द्वारा लेखक यह व्यंजित करता है कि रात- दिन शतरंज के खेल में उलझे रहने वाले इन दो अमीरजादों के घर की हालत दिन-ब-दिन बिगड़ती जा रही थी। ठीक यही हाल पूरे देश का था। ''पूस की रात '' कहानी में लेखक ने किसान के मजदूर हो जाने के कारणों और यंत्रणा को रेखांकित किया है। ''ईदगाह ''एक मुस्लिम परिवार की व्यथा - कथा को प्रस्तुत करने वाली कहानी है , जिसमें लेखक ने इस मनोवैज्ञानिक सत्य को प्रस्तुत किया है कि दुःख और संकट छोटे बच्चों को भी वयस्क बना देते हैं।

''ठाकुर का कुआं'',''सद्‌गति'' तथा ''सवा सेर गेहूं'' जैसी कहानियां ग्रमीण परिवेश में हो रहे या चल रहे गरीबों के शोषण को यथार्थतः आकलित करती हैं। बड़े क्रान्तदृष्टा लेखकों और कवियों की यह विशेषता रहती है कि उनके लेखन में परवर्ती साहित्य लेखन की प्रवृत्तियां कहीं - न -कहीं रूप में दृष्टिगत होती हैं। ''कफन '' कहानी की गणना , न केवल हिन्दी में, अपितु विश्व कहानी-साहित्य में एक श्रेष्ठ कहानी के रूप में होती है। इसमें मनुष्य के अमानुषीकरण (Dehumanalization की प्रक्रिया को लेखक ने सूक्ष्म व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। वस्तुतः समाज के नाना क्षेत्रों में ''माधव '' और ''घीसू'' क्यों उपजते हैं? उनके कारणों की लेखक ने यहां मनोवैज्ञानिक ढंग से पड़ताल की है। इस प्रकार प्रेमचन्दजी ने अपने समय में कहानी के आदर्श को प्रस्तुत करते हुए बहुत ही कुशलता के साथ कहानी के परवर्ती

विकास को भी चिह्नित किया है ।

प्रेमचन्द स्कूल के कहानीकारों में विश्वम्भरनाथ शर्मा ''कौशिक'', ''सुदर्शन '', पांडेय बेचन शर्मा ''उग्र'' , सियारामशरण गुप्त , भगवतीप्रसाद वाजपेयी , चतुरसेन शास्त्री , वृन्दावनलाल वर्मा, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, सूर्यकान्त त्रिपाठी ''निराला '', धनीराम प्रेम, श्रीनाथसिंह, उषादेवी मित्रा,शिवरानी देवी, तेजोरानी दीक्षित, गंगाप्रसाद मिश्र, भगवतीचरण वर्मा प्रभृति की गणना की जा सकती है ।

प्रसाद स्कूल के लेखकों में चण्डीप्रसाद हृदयेश, रायकृष्णदास, राधाकृष्ण, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह इत्यादि को ले सकते हैं । प्रेमचन्द के समय में ही हमें कहानी की दो स्पष्ट प्रवृत्तियां दृष्टिगत होती हैं -- सामाजिक कहानी और ऐतिहासिक कहानी । मनोवैज्ञानिक कहानी के भी कुछ सूत्र हमें इसी युग में मिले जाते हैं । प्रेमचन्द को आलोचक भले मनोवैज्ञानिक कहानीकार न मानते हों , परन्तु उनकी बहुत-सी कहानियों में हमें मनोविश्लेषणवादी प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं । इस समय के लेखकों ने दहेजप्रथा , अनमेल विवाह , शिशुविवाह , वृद्ध-विवाह , विधवा-विवाह का निषेध , नारी शिक्षा, अस्पृश्यता, हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य जैसी समस्याओं को लेकर कहानियों की रचना की है ।

प्रेमचन्दोत्तर कहानी १९३७-१९४७ :---

प्रेमचन्दयुग के बहुत-से लेखक प्रेमचन्दोत्तर युग में भी लेखनरत मिलते हैं । उनमें सर्वश्री पांडेय बेचन शर्मा ''उग्र '', सियारामशरण गुप्त, उपेन्द्रनाथ अश्क, भगवतीचरण वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी ''निराला '', प्रतापनारायण श्रीवास्तव, गंगाप्रसाद मिश्र, गंगाप्रसाद श्रीवास्तव, सुभद्राकुमारी चौहान, कमलादेवी चौधराइन, उषादेवी मित्रा, चन्द्रकिरण सोनरिक्शा, रोमवती तथा चन्द्रवती जैन आदि को परिगणित किया जा सकता है । इस दौर में चन्दगुप्त विद्यालंकार ने भी कुछ अच्छी कहानियां

लिखी हैं । उनकी ''तांगेवाला '', ''क ख ग '',''डाकू '',''चौबीस घण्टे '',''कामकाज '',''एक सप्ताह '' आदि कहानियां बड़ी चर्चित रही हैं। ''तांगेवाला '' कहानी में उन्होंने एक सामान्य निम्न वर्ग के व्यक्ति की मानवता को उकेरा है। ''क ख ग '' एक प्रयोगावादी कहानी है। मनुष्य की व्यक्तित्वहीनता को सांकेतिक रूप देने के लिए उन्होंने पात्रों को विशेष नाम न देकर ''क ख ग '' आदि वर्णों से काम चलाया है। परवर्तीकाल में बदी उज्जमां के उपन्यास ''एक चूहे की मौत '' में हमें यह प्रवृत्ति मिलती है। ''डाकू '' कहानी में विद्यालंकारजी ने एक खूंखार डाकू के हृदय- परिवर्तन की कहानी को आलेखित किया है। ''चौबीस घण्टे '' में ''कपेटा भूकंप '' की घटना को यथार्थतः चित्रित किया है। प्रस्तुत कहानी रिपोर्ताज के करीब पड़ती है। ''कामकाज'' कहानी में उन्होंने कामकाज के नाम पर मानवीय मूल्यों की जो निरंतर हत्या हो रही है उसे रेखांकित किया गया है, तो ''एक सप्ताह '' कहानी को उन्होंने पत्रात्मक शैली में लिखा है। पत्रात्मक शैली का उपन्यास में प्रारंभ उग्रजी ने ''चंद हसीनों के खतूत'' द्वारा कर दिया था।

प्रेमचन्दजी के बाद कहानी साहित्य में जैनेन्द्रजी का नाम आदर के साथ लिया जाता है। उनकी कहानियों में स्थूल घटना के स्थान पर पात्रों का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक निरूपण उपलब्ध होता है। मानसिक अन्तर्द्वन्द्व तथा भीतरी उहापोह को यहां प्राधान्य मिला है। उनकी कहानियों में ''खेल'', ''जाह्नवी '', ''फोटोग्राफी'',''अपना अपना भाग्य'', ''रूकिया बुढ़िया '',''पत्नी '',''भाभी '' आदि इस दौर की प्रसिद्ध कहानियां हैं।

आपकी ''खेल '' नामक कहानी को पढ़कर कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने कहा था कि ''हिन्दी में रविबाबू और शरदबाबू हमको मिल गये हैं और एक साथ मिले हैं। जैनेन्द्रजी की कहानियों में कथानायक अथवा तथ्य - निरूपण का इतना महत्व नहीं जितना कि मनोवैज्ञानिक चित्रण का। फिर भी वे बीच-बीच में बड़ी तथ्यपूर्ण बात कर देते हैं। उनकी कहानियों पर उनकी दार्शनिकता की छाप रहती है। जैनेन्द्रजी के उपन्यासों के पात्रों

के भांति उनकी कहानियों के पात्र भी कुछ असाधारण होते हैं । ''[१५] जैनेन्द्रजी को हम मानव-यथार्थ नहीं, अपितु मानव - संभावनाओं के कलाकार कह सकते हैं।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन ''अज्ञेय'' भी इस कालखण्ड के एक प्रमुख कथाकार हैं। उनकी प्रारंभिक कहानियों में हमें विप्लव और विस्फोट की भावना अधिक मिलती है। उनकी बाद की कहानियों में हमें मनोविश्लेषणवादी प्रवृत्ति मिलती है। ''अमर वल्लरी '' नामक कहानी में उन्होंने पिपल वृक्ष के जीवन - वृतान्त द्वारा काव्यात्मक भावों की अभिव्यक्ति की है। कमलाकांत वर्मा की ''पगदंडी'' कहानी आत्मकथात्मक ढंग से लिखी गई है। प्रस्तुत कहानी में यह शिक्षा दी गई है कि उपेक्षित रहते हुए भी मनुष्य को अपने कर्तव्य - पालन में लीन रहना चाहिए। सर्वश्री अन्नपूर्णानंद, जी. पी. श्रीवास्तव, भगवतीचरण वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, विनोदशंकर व्यास,पांडेय बेचन शर्मा '' उग्र'', पहाड़ी , यशपाल , विष्णु प्रभाकर, राधाकृष्ण आदि अन्य कहानीकार हैं, जिनकी कहानियां हिन्दी कहानी के पथ को आलोकित करती रहीं हैं। अन्नपूर्णानंद और जी.पी. श्रीवास्तव ने इस समय कुछ विनोदपूर्ण कहानियां लिखी थीं। भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में भी सामाजिक तथा राजनीतिक व्यंग्य खूब उभरकर आया है। चतुरसेन शास्त्री तथा वृन्दावनलाल वर्मा ने ऐतिहासिक कहानियों के साथ - साथ कुछ सामाजिक कहानियां भी प्रदान की। प्रस्तुत कालखण्ड की लेखिकाओं की कहानियों में हमें हिन्दू पारिवारिक जीवन के कुछ सुन्दर चित्र उपलब्ध होते हैं।

यशपाल, अमृतराय, भैरवप्रसाद गुप्त, मन्मथराय गुप्त प्रभृति कहानीकारों में हमें प्रगतिवादी - मार्क्सवादी चेतना के दर्शन होते हैं। इस दृष्टि से यशपाल की ''महादान '', ''दुःख'',''करवा का व्रत'', '' परदा'' आदि कहानियां उल्लेखनीय कही जा सकती हैं।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी १९४७ - अद्यावधि :---

सन् १९४७ में हमारा देश अंग्रजों की पराधीनता से मुक्त हुआ। इस राजनीतिक स्वतंत्रता ने हमारे देश की सामाजिक , सांस्कृतिक, आर्थिक, शैक्षिक प्रवृत्तियों के विभिन्न आयामों को प्रभावित किया। समग्र देश का वातावरण सामाजिक - राजनीतिक हलचलों , उमंग और उल्लास और साथ ही विभाजन की विभीषिका के कारण गहरी विषाद की परतों में डूब गया। एक तरफ आनंद और उत्सव; दूसरी तरफ आतंक , भय और मौत का छाया। स्वतंत्रता के बाद कुछ वर्षों तक तो देश की जनता इस खुशफहमी में रही कि अब हमारा भविष्य बदलेगा , स्थिति में कुछ सुधार आयेगा। नये क्षितिज उद्घाटित होंगे। परन्तु स्थिति निराशाजनक ही रही। गरीब, और गरीब होते गये; अमीर , और अमीर होते गये। राजनीति , धर्म, समाज, शिक्षा आदि सभी क्षेत्रों में भ्रष्टाचार और कदाचार का बोलबाला शुरू हो गया और परिणामस्वरूप मोहभंग की स्थिति का निर्माण हुआ, जिसे हम माखनलाल चतुर्वेदी प्रणीत ''रावी का तट, यमुना का तट'', सर्वेश्वरदयाल सक्सेना कृत ''पंच महाभूत '' तथा धूमिल की ''संसद से सड़क तक '' जैसी कविताओं में रेखांकित कर सकते हैं। आज़ादी से पूर्व हमारे देश की आम जनता ने अपने रहनुमाओं के वक्तव्य पर आधारित जो स्वप्न संजोये थे , उन पर तुषारापात हुआ। वस्तुतः नेताओं ने जो कहा था उसका विलोमी समीकरण ही दृष्टिगोचर होता है। डॉ. पारूकांत देसाई ने इस निराशाजनक परिस्थिति का चित्रण निम्नलिखित पंक्तियों में किया है :---

''१५ अगस्त १९४७ वह मध्यबिन्दु है
हमारे देश की स्वाधीनता के इतिहास का
जहां से हमने उलटना सीखा
जहां से हमने पलटना सीखा
जहां से हमने मुड़ना सीखा
सिद्धान्तों से सिद्धान्तों की खोल को ओढ़कर।'' [१६]

कविता की भांति उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, व्यंग्य सभी में मोहभंग की स्थिति को रेखांकित किया जा सकता है । स्वतंत्रता के पश्चात् जो मूल्य - परिवर्तन हुए उसको डा. शिवप्रसादसिंह ने अपने उपन्यास ''अलग अलग वैतरणी '' में एक गहरे दर्द के साथ अभिव्यंजित किया। उपन्यास का एक पात्र जग्गन मिसिर उपन्यास के नायक विपिन बाबू से कहते हैं। यथा --- ''आप जा रहे हैं विपिन बाबू, जाइये । कोई इसके लिये आपको दोष भी नहीं देगा। सभी जाते हैं। हमारे गांवों से आजकल एकतरफा रास्ता खुला है । निर्यात , सिर्फ निर्यात। जो भी अच्छा है, काम का है, वह यहाँ से चला जाता है । अच्छा अनाज , दूध , घी , सब्जी भी जाते हैं। अच्छे मोटे - ताजे जानवर , गाय - बैल , भेंड़ - बकरे भी जाते हैं। हट्टे - कट्टे मजबूत आदमी , जिनके बदन में ताकत है, देह में बल है, खींच लिये जाते हैं पलटन में, पुलिस में, मिलेटरी में, मील में। फिर वैसे लोग जिनके पास अक्ल है, पढ़े-लिखे हैं , यहां कैसे रह जायेगें ? वे जायेगें ही। उन्हें जाना ही होगा। जाते तो लोग पहले भी थे, मगर अक्सर वे, जिन्हें काम नहीं मिलता था या जो जमींदार के जोरो - जुल्म से आजीज आ गए थे । पर अब तो एक नये तरह का अनतगौन हो रहा है । यहां रहते वे हैं जो यहां रहना नहीं चाहते, पर कहीं जा नहीं पाते। यहां से अब जाते वे हैं जो यहां रहना चाहते हैं ; पर रह नहीं पाते।'' [१७]

''अलग अलग वैतरणी '' की यह समस्या कुछ हद तक हमारे देश की भी समस्या है । हमारे देश का बुद्धिधन धीरे- धीरे विदेश जा रहा है । डा. नार्लिकर , डा. चन्द्रशेखर , डा. खुराना , डा. अमर्त्य सेन इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। दूसरी तरफ इस महामूल्य बुद्धिधन की एवज में हम आयात कर रहे हैं ---हिप्पी , बिटल और उनकी कचरा संस्कृति।

महात्मा गांधी की हत्या ,चीनी हमला ,पंडित जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु , लालबहादुर शास्त्री का शंकास्पद स्थिति में देहावसान, श्रीमती इन्दिरा गांधी का प्रधान मंत्री होना, आपातकालिन स्थिति की घोषणा , कांग्रेस का विभाजन , प्रथम बार कांग्रेस तथा श्रमती इन्दिरा गांधी की पराजय , जनता - मोरचा का शासन, जनसंघ का भा.ज.पा में परिवर्तित

होना, श्रीमती इन्दिरा गांधी का पुनर्विजय , पंजाब तमिलनाडु तथा पूर्वचल में आतंकवादी - अंतिम- वादी प्रवृत्तियों का जोर पकड़ना , प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी की उनके ही सिख अंगरक्षकों द्वारा हत्या, फलतः दिल्ली तथा देश के कई महानगरों में सिखों की निर्मम हत्याएं , राजीव गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस की ज्वलंत विजय, राजीव गांधी की हत्या, उसके बाद अस्थिर और अनेकपक्षीय सरकारों का गठन , बार-बार के चुनाव, बोफोर्स कांड, हवाला कांड , हर्षद महेता कांड, चारा - घोटाला, तहलका कांड जैसे अनेक आर्थिक - राजनीतिक घोटाले, राजकारण - धर्मकारण का ध्रुवीकरण , अयोध्या में बाबरी मस्जिद का गिराया जाना, फलतः पाकिस्तान , बांगलादेश तथा भारत के अनेक महानगरों में हिन्दू - मुस्लिम कौमी दंगों में हजारों निर्दोष लोगों का मारा जाना जैसी अनेक राजनीतिक , सामाजिक घटनाएं हमारे दृष्टिपटल पर छाती रही हैं और इन सबका प्रभाव भी किसी -न-किसी प्रकार से स्वातंत्र्योत्तर कहानी पर पड़ा है ।

स्वातंत्र्योत्तर काल में जो राजनीतिक , सामाजिक और सांस्कृतिक नैतिक बदलाव आये उनको स्वातंत्र्योत्तर कहानी में आत्मसात किया गया है । कला की कोई भी विद्या अपने सांस्कृतिक परिवेश का समाहार करती है । इस संदर्भ में युरियुकिन के निम्नलिखित विचारों को ध्यान में रखना होगा : " At all time art has been a means of man's Learning about The world and himself, of comprehending The Dialectics of Historical development of human society and dialecties of human sout. At all time, art has asserted certin sociel moral and spritua; values at all time art Formed aesthetic teste by giving man pleasure and joy by giving to his artistic creative potential." [१८]

स्वतंत्रता के बाद जो अनेक आंदोलन हुए उनके तहत नयी

कहानी , सचेतन कहानी, अकहानी, समान्तर कहानी, साठोत्तर कहानी, पैंसठोत्तर कहानी, समकालीन कहानी जैसे कहानी के कई नाम सामने आये, परन्तु इनमें से केवल दो मोड़ो को विशेषतः लक्षित किया सकता है । ये दो मोड़ हैं -- नयी कहानी और समकालीन कहानी । वैसे तो प्रत्येक लेखक अपनी नई कहानी में कुछ नया देने का प्रयत्न करता ही है, इस अर्थ में तो प्रत्येक कहानी नयी कहानी होती है । परन्तु हिन्दी कथा - साहित्य में "नयी कहानी " शब्द रूढ़ हो चुका है । यहां नयी कहानी से तात्पर्य सन् १९४७ के बाद की कहानी से है । यहां एक ओर तथ्य ध्यातव्य होगा कि सन् १९४७ के बाद की कहानी को "नयी हानी " कहा जायेगा , लेकिन ४७ के बाद की किसी भी कहानी को हम "नयी कहानी " नहीं कह सकते । नयी कहानी में कथ्य और शिल्प दोनों धरातलों पर नयापन होना चाहिए । यह नयी विचारधारा की कहानी है । स्वातंत्र्योत्तर सोच एवं चिंतन को व्यक्त करने वाली कहानी है । अब कहानी केवल कथावस्तु और चरित्र-चित्रण मात्र नही है । बल्कि एक मनःस्थिति , एक भाव स्थिति, एक प्रतीक , एक परिदृश्य कहानी का रूप ले सकता है । उसने आदि मध्य और अन्त के कथानक ढांचे को भी तोड़ा है । अब एक सार्थक , सफल कहानी के लिए चमत्कारपूर्ण अन्त की आवश्यकता नहीं है । नयी कहानी समस्याओं का समाधान भी नही है , अपितु वह कई बार अनेक नये प्रश्नों को उकेरती है । डा. रमेश पंड्या के मातानुसार "नयी कहानी में सांकेतिकता , बिम्बविधान एवं प्रतीक-योजना शिल्पगत विशेषताएं देखने को मिलती हैं । सांकेतिकता का प्रयोग " केवल अन्त में या किसी विशेष स्थल पर नहीं होता , कहानी के पूरे ढ़ांचे में इधर-उधर बिखरा हुआ मिलता है । इससे कहनी लेखकों को प्रभावोत्पादन में विशेष सहायता मिल जाती है । निर्मल वर्मा की "परिन्दे "कहानी और कमलेश्वर की "पत्नी की तस्वीर " में सांकेतिकता देखी जा सकती है । नया कहानीकार अन्तर्द्वन्द्ध का प्रयोग इस ढंग से करता है कि कहानी अधिक सजीव और स्वाभाविक प्रतीत होती है । अमरकान्त की "डिप्टी कलक्टरी " में ये

विशेषताएं देखी जा सकती हैं । नयी कहानी में प्रतीकों का प्रयोग भी बराबर हो रहा है । अजीतकुमार की ''झुके गरदनवाला ऊंट '' तथा निर्मल वर्मा की ''दहलीज '' में बिम्बों की प्रेषणीयता प्राप्त होती है । आज कहानीकार विभिन्न कलात्मक प्रयोगों से कहानी के कलेवर को संवार रहा है ।'' [१९]

डा. पुष्पपाल सिंह नयी कहानी की समयावधि सन् १९६५ तक बताते हैं। [२०] सन् १९५५ में राष्ट्र भाषा सभा पूणे की ओर से कहानियां १९५५ का प्रकाशन हुआ था। इस कथा-संग्रह में संकलित सभी कहानियां ''नयी कहानी '' दौर की चर्चित कहानियां हैं , जिनमें हम अमरकान्त की ''डिप्टी कलकटरी '', कमलेश्वर की ''राजा निरबंसिया '', कृष्णा सोबती की ''बादलों के घेरे '', घर्मवीर भारती की ''गुल की बन्नो '',फणीश्वरनाथ रेणु की ''रसप्रिया '',भीष्म साहनी की ''भाई रामसिंह '', मार्कण्डेय की ''हंसा जाई अकेला '', मोहन राकेश की ''मवाली'' ,विष्णु प्रभाकर की ''धरती घूम रही है '' जैसी कहानियों को उल्लेखित कर सकते हैं।

नयी कहानी की कथ्यगत प्रवृत्ति में यथार्थ के प्रति एक नया रुख, दाम्पत्यगत दूरियों की ईमानदार स्वीकृति, नारी-पुरूष के काम-संबंधों का स्वीकार, महानगरीय जीवनबोध, मूल्यों और मान्यताओं का परिवर्तन, पुराने मूल्यों के सामने विद्रोहात्मक मुद्रा, विदेशों से आयातित मार्क्सवाद-अस्तित्ववाद प्रभृति दर्शनों का प्रभाव, वैयक्तिक चेतना का प्राबल्य, वैज्ञानिकीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण आदि का प्रभाव , जीवन के प्रत्येक स्तर पर रोमानी-बोध से मुक्ति आदि अभिलक्षणों को रेखांकित किया जा सकता है । [२१]

नयी कहानी की शिल्पगत विशेषताओं में भाषा की समर्थ अभिव्यंजना, सशक्त बिम्बविधान, प्रतीकात्मकता, कथानक के स्थान पर परिवेश-चित्रण को अधिक महत्व , पूर्वदीप्ति पद्धति का अधिकाधिक प्रयोग , समानान्तर और दोहरे कथानकों का प्रयोग निष्कर्षहीनता, कहानी में गद्य की अन्य विधाओं की अन्तर्भुक्ति , कहानी में लघुता या दीर्घता

का निषेध, अन्य अनेकानेक नूतन प्रयोग (लोककथा, किस्सा तोता मैना, सिंहासन बत्तीसी,पौराणिक कथाशैली आदि कथा के पुराने लक्षणों को यथावसर अंगीकृत करते जाना) आदि अभिलक्षणों को रेखांकित किया जा सकता है। [२२]

ऊपर जिन कहानियों का उल्लेख किया गया है, उनके अतिरिक्त ग्रैंग्रीन (अज्ञेय), लाल पान की बेगम (रेणु) , आर्द्रा (मोहन राकेश), वापसी (उषा प्रियंवदा), मुगलों ने सल्तनत बख्श दी (भगवतीचरण वर्मा), एक गौ (जैनेन्द्र) , दोपहर का भोजन (अमरकान्त), लेरिंजाइटस (उपेन्द्रनाथ अश्क), दिल्ली में एक मौत (कमलेश्वर),चीफ की दावत (भीष्म साहनी), लंका-विजय के बाद रामराज्य (हरिशंकर परसाई), प्रेतमुक्ति (शैलेश मटियानी) आदि कहानियों को हम नयी कहानी की प्रातिनिधिक कहानियां मान सकते हैं।

कमलेश्वर ने नयी कहानी के संदर्भ में कहा था -- ''घटनाएं नयी नहीं होतीं, मानवीय संबंध भी नये नहीं होते , मनोवेग और आंतरिक उद्वेग भी अछूते नहीं होते, पर इन सबकी एक नयी दृष्टि से अन्विति एक नया प्रभाव छोड़ती है।''[२३]

कमलेश्वर के उक्त कथन के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि मानवीय संबंध और मनोवेग आदि की बात तो ठीक है , पर घटनाएं बदलाती नहीं है , यह पूर्णरूपेण सत्य नहीं है । युगीन परिस्थितियों के अनुसार घटनाओं में बदलाव आता ही है । पचास साल पहले ''बोबिटिंग '' पर कोई कहानी नहीं लिख सकता था, या ''उसने कहा था '' में जो विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि है , उसे नकारा नहीं जा सकता।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि नयी कहानी में यथार्थ के प्रति एक नया दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है, जिसकी प्रस्तुति के लिए लेखक सर्वथा नये शिल्प की ओर मुड़ रहे हैं और उसी उपक्रम में कथा-कथन की पुरातन रूढ़ियों को भी आत्मसात कर रहे हैं।

समकालीन हिन्दी कहानी :---

सन् १९६२-६५ ई. तक आते-आते शनैः शनैः नयी कहानी भी रूढ़िगत मुद्रा को धारण करने लगती है और कहानी को पुनः एक नये मुहावरे की तलाश में निकलना पड़ता है। इस स्थिति के रहते अनेक नये कहानी आंदोलन जन्म लेते हैं। इन कहानी - आंदोलनों में जगदीश चतुर्वेदी का ''अकहानी आंदोलन'', अमृतराय का ''सहज कहानी आंदोलन'', महीपसिहं द्वारा प्रस्थापित ''सचेतन कहानी'' आंदोलन, गंगाप्रसाद विमल द्वारा प्रबोधित ''समकालीन कहानी आंदोलन'' आदि मुख्य हैं।

वस्तुतः ये सारे आंदोलन कहानी में कुछ नया कर गुजरने की मंशा से अग्रसरित हुए हैं। अतः कहानी -साहित्य के अधिकांश आलोचकों ने अपनी सुविधा के लिए ''समकालीन हिन्दी कहानी'' संज्ञा को अंगीकृत कर लिया है। इस प्रकार समकालीन कहानी को हम नयी कहानी का अगला मोड़ और कालगत विभावना की दृष्टि से अत्याधुनिक कहानी का वर्तमान चरण कह सकते हैं। परिणाम एवं गुणात्मकता उभय दृष्टि से समकालीन कहानी ने हिन्दी कथा-साहित्य को एक विशिष्ट समृद्धि प्रदान की है।

समकालीन कहानीकारों में ज्ञानरंजन, गंगाप्रसाद विमल राजकमल चौधरी, दूधनाथसिंह, रविन्द्र कालिया, ममता कालिया, काशीनाथ सिंह, महेन्द्र भल्ला, इसराइल, इब्राहिम शरिफ, कृष्णा अग्निहोत्री, चित्रा मुद्गल, दीप्ति खंडेलवाल, मृदुला गर्ग, राजी सेठ, राजेन्द्र अवस्थी, गुलशेरखान शानी, गिरिराज किशोर, गोविन्द मिश्र, शैलेश मटियानी, धर्मेन्द्र गुप्त, नरेन्द्र कोहली, मुद्राराक्षस, पृथ्वीराज मोंगा, निरुपमा सेवती, मधुकर सिंह, मणिमधुकर, मणिका मोहिनी, राकेश वत्स, रमेशचन्द्र शाह, बटरोही, विजय चौहान, श्रवणकुमार गोस्वामी, सुधा अरोड़ा, स्वदेश दीपक , से. रा. यात्री, सतीश जायस्वाल, सुरेश उनियाल, हिमांशु जोशी, हृदयेश,

मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान, सृंजय, नासिरा शर्मा, प्रियंवद, क्षिति शर्मा, विजय संदीप, लता शर्मा, जया जादवानी, इन्तजार हुसैन, विनोद साही, संजय सहाय, मंगलेश डबराल, राजेन्द्र लहेरिया, अमृतसिंह दीपक, अमृतसिंह प्रभृति कहानीकारों के नाम सुविधापूर्वक लिये जा सकते है ।

समकालीन कहानी अपने समग्र रूप में बहुआयामी होती जा रही है । जीवन की कोई भी समस्या और कोई भी क्षेत्र उससे अछूत नहीं रहा है । जीवन की विषम आर्थिक एवं मानसिक परिस्थितियां, वैज्ञानीकरण, औद्योगीकरण तकनीकी विकास और उससे उत्पन्न नवीन स्थितियां-परिस्थितियां, मूल्यगत संकट एवं संक्रमण, नैतिक मान्यताओं तथा रूढ़ियों का विघटन, व्यक्ति के जीवन में घर कर गई घोर निराशा तथा उससे उत्पन्न व्यथा एवं क्रोध, महानगरीय तथा औद्योगिक बस्तियों की समस्याएं , भ्रष्ट सामाजिक -राजनीति-धर्मिक व्यवस्थाएं , प्रेम तथा सेक्स का नूतन भावबोध, अर्थतंत्र का बढ़ता दबाव , खंडित - दरकते पारिवारिक संबंध, नौकरीपेशा नारी की समाज में बदलाती हुई स्थिति, नारी में आधुनिकता का तथा पुरातनता का द्वन्द्व, देश के राजनीतिक परिवेश और उसमें व्याप्त भ्रष्टाचार का सांगोपांग चित्रण, युवा आक्रोश, शिक्षा में बढ़ता भ्रष्टाचार, छात्र-अनुशासन-हीनता, शिक्षित बेरोजगारी, प्रतिभाओं को दारूण अवमानना, नौकरशाहों का दबाव जैसी विविधवर्णी समस्याओं को लेकर यह कहानी अग्रसरित हो रही है । यही कारण है कि डा. रमेशकुंतल मेघ इन कहानियों को ''तत्काल''और ''फिलहाल'' के समयबोध के जरिये जीवन का साक्षात्कार करानेवाली कहानी बताते हैं । [२४]

समकालीन कहानी के संदर्भ में डा. पुष्पपालसिंह का निम्नलिखित मंतव्य ध्यातव्य रहेगा :

'' समकालीन कहानी की भाषा और शिल्प अत्यन्त समृद्ध है । इस कहानी में भाषा को जीवन के निकट ले जाकर उसे कहानी विधा के अनुरूप सहज और स्वाभाविक रूप प्रदान कर उसकी सम्प्रेषण क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है । इसे हम भाषा की सर्वथा नयी तराश कह सकते हैं । गद्य-

भाषा की सहजता में जीवनधर्मी गंध कितनी अर्थ-क्षमता भर सकती है, वर्तमान कहानी इसका प्रमाण है। शिल्प की दृष्टि से भी समकालीन कहानी अत्यन्त समृद्ध हो गई है। उसमें व्यंग्य, फण्टासी, लोककथा, पौराणिक कथानाकों के नूतन संदर्भ तथा गद्य की अनेक विधाएं -- एकांकी, निबंध, रिपोर्ताज आदि भी -- सहजता से समा गए हैं।''[२५]

विवेच्य लेखकों का कहानी साहित्य को योगदान :---

प्रस्तुत प्रबंध में प्रेमचन्द तथा शैलेश मटियानी की कहानियों के दलित सरोकारों को जांचने-परखने का उपक्रम है। अतः दोनों के प्रदान का विहंगावलोकन आवश्यक हो जाता है। मानव-जीवन को कहानी में लिखना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। वही लिख सकता है जिसने मानव-जीवन-सागर में गोते लगाये हों, जो गहराईमें गया हो। हम सब तैरते हैं --- सतह पर, किनारे पर। मझधार में जाने का सहास तो कोई बिरला ही रखता है। किनारे पर सुविधा है, जोखिम नहीं है, डूबने का भय भी नहीं है। मझधार में जोखिम ही जोखिम है। ऐसा कहा जाता है कि दर्द के बिना कविता नहीं लिख सकते। पर दर्द के बिना कहानी भी कैसे लिख सकते हैं? और सच पूछा जाय तो सही-असली कहानी कविता ही तो होती है। भावों को संवेदना में बदले बिना कहानी नहीं लिखी जा सकती।

कहानी में घटना होती है, पर उस घटना को संवेदना में बदलना पड़ता है। यह काम बड़ा कठिन है। उसके लिए साधना चाहिए -- जीवन की साधना, कला की साधना। जो जीवन में खरा उतर सकता है, वह कहानी में भी। जो बात उपन्यास पर लागू होती है, वह कहानी पर भी लागू होती है कि एक मामूली उपन्यास लिखना निहायत आसान काम है, पर एक अच्छा उपन्यास लिखना टेढ़ी खीर है; ठीक उसी प्रकार एक मामूली कहानी लिखना बड़ा आसान काम है, पर एक अच्छी कहानी लिखना अत्यन्त दुष्कर कार्य है।

कहानी न होगा कि हमारे दोनों विवेच्य लेखक इस क्षेत्र के महारथी हैं। प्रेमचन्द और शैलेश मटियानी, तपोपूत, साधनापूत लेखक। दोनों का जीवन संघर्ष की एक अनवरत यात्रा। दोनों मसिजीवी। दोनों से अन्याय और अत्याचार बर्दाश्त नहीं होते थे। दोनों दलित-पीड़ित-शोषित के पक्षधर हैं। दोनों के जीवन की अंतिम परिणतियों में अंतर होते हुए भी, आंतरिक संघर्ष में कोई फरक नहीं है। यहां दोनों के कहानी -लेखन और उनके योगदान पर एक दृष्टिपात करने का उपक्रम है।

प्रेमचन्द का कहानी को योगदान :---

जिस प्रकार हिन्दी उपन्यास को गौरव एवं गरिमा प्रेमचन्द द्वारा प्राप्त हुए, हिन्दी कहानी भी प्रेमचन्द से गौरवान्वित हुई है। यह भी एक विचित्र संयोग है कि जहां अधिकांश कथा-साहित्य के लेखक कहानी से उपन्यास की ओर जाते हैं, वहां मुंशी प्रेमचन्द उपन्यास से कहानी की ओर गये हैं। इसका अर्थ यह कतई नहीं कि बाद में उन्होंने उपन्यास नहीं लिखे। यह तो प्रारंभिक लेखन की बात है। अभिप्राय यह कि पहले उन्होंने उपन्यास लिखे हैं और उपन्यास-लेखन के कुछ वर्ष बाद कहानी-लेखन की ओर भी मुड़ते हैं। और फिर यह लेखन समानान्तर रूप से चलता है।

प्रेमचन्दजी का प्रथम उपन्यास "असर्रारे मजाविद" (देवस्थान रहस्य) बनारस से प्रकाशित होने वाले उर्दू पत्र "आवाज-ए-खल्क" में ८ अक्तूबर सन् १९०३ से धारावाहिक रूप में आने लगा था। इसे एक विचित्र संयोग ही समझना चाहिए कि आठ अक्तूबर को प्रेमचन्द की (तब नवाबराय) प्रथम रचना प्रकाशित हुई थी, और बराबर तैंतीस वर्ष बाद ८ अक्तूबर को ही प्रेमचन्द ने अंतिम सांस ली। सन् १९०६ में "हमखुर्मा-ओ-हमसबाब"(प्रेमा) उपन्यास प्रकाशित हुआ, जिसमें विधवा-विवाह की समस्या को उठाया गया है। सन् १९०७ में "कृश्ना" उपन्यास प्रकाशित होता है, जिसमें अंग्रजी कुशासन की निदां की गई है। "प्रेमा" और

"कृश्ना" बाद में कुछ परिवर्द्धित रूप में क्रमशः प्रतिज्ञा और "ग़बन" नाम से सन् १९२२-३० में प्रकाशित किए गए हैं। [२६]

सन् १९०७ के प्रारंभ में प्रेमचन्द अपनी प्रथम कहनी "दुनिया का सबसे अनमोल रत्न" लिखते हैं, जो उसी वर्ष "ज़माना" में प्रकाशित हुई है। इस कहानी के संदर्भ में डा. मनोहर बंदोपाध्यास लिखते हैं :

"The stroy is full of paptriotic Fervour. The most precious possession for the heroine is not any wealth or jewellery but that drop of blood which is shed for the sake of the motherland. In the very story we find premchand's concern for freedom of the country which forms one of the prime themes in his future works" [२७]

सन् १९०८ के अन्त-भाग में प्रेमचन्दजी का प्रथम कहानी-संग्रह "सोज़ेवतन" प्रकाशित होता है। उसमें उनकी उपर्युक्त प्रथम कहानी के अतिरिक्त "शेख मखमूर", "यही मेरा वतन है", "सांसारिक प्रेम और देश प्रेम" आदि कहानियां भी संकलित हैं। इन कहानियों के संदर्भ में डा. बंदोपाध्याय लिखते हैं :

"Shiek makhmoor", "Yahi Mera watan hai" (This is my country) and "Sansarik Prem Aur Des Prem", (Love for the land and the family). like the first, the second story too is replete with patriotic inspiration and calls for the need of communal integration about which the author laid great emphassis in his works during later years. "Yahi mera watan hai" draws on some what extended canvas. It protrays a character who forsakes his wealth and family in America to return to his country and dedicates his

life to the seyice of the motherland. The author's objective is to propagate the extraordinary sacrifice of his hero and, therefore, he has painted the idealised picture of unusal renunciaetion. In the story "Sansarik Prem Aur Desh Prem" the author attempts to the superiority of country's love to that of the family. The plot centres on josef mezzines's nationalism his sacrifice and struggle for the freedom of his country. [२८]

सन् १९०९ में "सोज़ेवतन" के प्रकाशन के कुछ ही समय बाद सब-डिप्टी इंस्पेक्टर के रूप में बढ़ती होती है और उनका तबादला हमीरपुर जिले के महोबा में हो जाता है। यहां का वातावरण प्रेमचन्दजी को बहुत ही अच्छा लगता है , परन्तु केवल चार ही महीने व्यतीत हुए थे कि सरकार का कोप उन पर टूट पड़ता है। एक दिन वह दौरे पर थे कि अचानक जिला कलक्टर का सम्मन आता है। "सोज़ेवतन" की कापी उनके टेबल पर पड़ी थी। प्रेमचन्द समझ गये। पूछताछ के बाद कलक्टर ने कहा कि उनकी कहानियों से राजद्रोह की बू आती है। वह कहता है :

"Thank your stars that you live under British empire. Your hands would have been chopped if it were moghul rule."[२९] हजार प्रतियां छपी थीं। तीन सौ बिक चुकी थी। शेष प्रतियों को प्रेमचन्द के सामने कलक्टर ने जलवा दीं। १३ मई १९१० को दयाराम निगम को जो पत्र लिखा है उसमें वे लिखते हैं :

"Whatever I wtire, on any subject- may be even on elephant tusk- I must submit to the district collector. It is not once or twice a year that I write. It is my daily work. If every month a manuscript is sent to him he is sure to feel that I am slack in my official

ducty. Therefore, "Nawabrai" is now dead for some time--- " [३०] इस प्रकार बरसों की महेनत से ''नवाबराय'' के नाम से जो सोहरत पायी थी उसे उन्हें छोड़ना पड़ता है और १९१० अक्तूबर-नवम्बर में निगमजी द्वारा सुझाया हुआ ''प्रेमचन्द'' नाम धारण कर लेते हैं और उसी नाम से जीवनपर्यन्त लिखते हैं। इस नाम से जो उनकी प्रथम कहानी छपती है, वह है -- ''बड़े घर की बेटी''।

यह कहानी ''ज़माना'' में दिसम्बर १९१० में प्रकाशित हुई थी। एक सितम्बर १९१५ से प्रेमचन्द पूर्णतया हिन्दी में लिखने का मन बना लेते हैं। बस्ती से एक पत्र उन्होंने निगम को लिखा था :

"I am now practising to write in Hindi. It is not possible to live in Urdu writing. It seems I will have to spend life in Hindi writing like Balmukund Gupt. which Hindi writer has achieved the suceess in Urdu that I shall attain"[३१] और भी कोई कारण थे जिनके रहते प्रेमचन्दजी उर्दू पत्रों के संपादक तथा प्रकाशकों से नाराज-से रहते थे।

अमृतराय ने ''कलम का सिपाही'' में प्रेमचन्दजी की कुल २२४ कहानियों के सिलसिलेवार प्रकाशन का ब्यौरा दिया है जिसकी सूची यहां प्रस्तुत कर रही हूं :। फर्क यह है कि अमृतराय ने सूची अकारादिक्रम से प्रस्तुत की है, में यह सूची प्रकाशन-वर्ष के अनुसार प्रस्तुत कर रही हूं : [३२]

क्रम	कहानी	कहाँ प्रकाशित	प्रका. वर्ष
१.	दुनिया का सबसे अनमोल रत्न	: ज़माना	: १९०७
२.	सांसारिक प्रेम और देशप्रेम	: ज़माना	: अप्रैल, १९०८
३.	शेख मखमूर	: सोज़ेवतन	: १९०९ से पूर्व
४.	शोक का पुरस्कार	: सोज़ेवतन	: १९०९ से पूर्व

५. पाप का अग्निकुण्ड	: ज़माना	: मार्च, १९१०
६. बड़े घर की बेटी	: ज़माना	: दिसेबर, १९१०
७. रानी सारंधा	: ज़माना	: सतम्बर,१९१०
८. शिकार	: ज़माना	: जून, १९१०
९. आखिरी मंज़िल	: ज़माना	: सितम्बर,१९११
१०. गरीब की हाय	: ज़माना	: अक्तूबर,१९११
११. राजा हरदौल	: ज़माना	: अप्रैल, १९११
१२. विक्रमादित्य का तेगा	: ज़माना	: जनवरी, १९११
१३. ममता	: ज़माना	: फरवरी, १९१२
१४. राजहठ	: ज़माना	: सतम्बर,१९१०
१५. आल्हा	: ज़माना	: जनवरी,१९१२
१६. नसीहतों का दफ्तर	: ज़माना	: जून, १९१२
१७. अंधेर	: ज़माना	: जुलाई, १९१३
१८. अमावस की रात	: ज़माना	: अप्रैल, १९१३
१९. तिरिया-चरित्तर	: ज़माना	: जनवरी, १९१३
२०. धर्मसंकट	: ज़माना	: मई, १९१३
२१. बांका जमींदार	: ज़माना	: अक्तूबर,१९१३
२२. मिलाप	: ज़माना	: जून, १९१३
२३. सिर्फ़ एक आवाज़	: ज़माना	: सितम्बर,१९१३
२४. अनाथ लड़की	: ज़माना	: जून, १९१४
२५. अपनी करनी	: ज़माना	: अक्तूबर,१९१४
२६. अमृत	: उर्दू प्रेमपचीसी	: १९१४ से पूर्व
२७. कर्मों कर फल	: उर्दू प्रेमपचीसी	: १९१४ से पूर्व
२८. खून सफेद	: ज़माना	: जुलाई, १९१४
२९. नमक का दारोगा	: उर्दू प्रेमपचीसी	: १९१४ से पूर्व
३०. नेकी	: उर्दू प्रेमपचीसी	: १९१४ से पूर्व
३१. पछतावा	: ज़माना	: नवम्बर १९१४

३२. शिकारी रामकुमार : ज़माना : अगस्त, १९१४

सन् १९१५ : विस्मृति - ज़माना - फरवरी - ; गैरत की कटार - जमाना - जुलाई ; बेटी का धन - जमाना : नवम्बर ; सौत - १ , सरस्वती, दिसम्बर।

सन् १९१६ : दो भाई - ज़माना - जनवरी ; सज्जनता का दण्ड - सरस्वती - मार्च ; पंच परमेश्वर - सरस्वी - जून ; घमंड का पुतला - जमाना - अगस्त ; जुगनू की चमक - ज़माना - अक्तूबर ; धोखा - ज़माना -नवम्बर।

सन् १९१७ : मर्यादा की बेटी - ज़माना - जनवरी - ज्वालामुखी - ज़माना - मार्च ; उपदेश - ज़माना - मई; ईष्वरीय न्याय - सरस्वती - जुलाई ; महातीर्थ- ज़माना - सितम्बर ; कप्तान साहब - ज़माना - दिसम्बर ; दुर्गा का मंदिर - सरस्वती - दिसम्बर।

सन् १९१८ : फ़तेह - जमाना - अप्रैल ; बलिदान - सरस्वती - मई ; वफ़ा का खंजर - ज़माना - नवम्बर।

सन् १९१९ : सेवामार्ग - स्वदेशी - फरवरी।

सन् १९२० : आत्माराम - ज़माना - जनवरी ; दफ्तरी - कहकशां - जनवरी ; पशु से मनुष्य - फरवरी ; मनुष्य का परम धर्म - स्वदेश - मार्च ; इज्जत का खुन - अप्रैल ; ब्रह्मा का स्वांग - मई ; पुत्रप्रेम - सरस्वती - जून ; मृत्यु के पीछे - सुबहे उम्मीद - सितम्बर।

सन् १९२१ : बूढ़ी काकी ; शान्ति - १ -- प्रेमबत्तीसी ; विचित्र होली - स्वदेश - मार्च ; विषम समस्या - ज़माना - मार्च ; विमाता - अप्रैल ; आदर्श विरोध - जुलाई ; लाग - डाट -- जुलाई ; लालफीता - ज़माना - जुलाई ; प्रारब्ध - अक्तूबर। त्यागी का प्रेम - मर्यादा - नवम्बर।

सन् १९२२ : मूठ - मर्यादा - जनवरी ; हार की जीत - मर्यादा - मई ; स्वत्व रक्षा : माधुरी - जुलाई ; अधिकार - चिन्ता : माधुरी अगस्त ; चकमा - नवम्बर ; पूर्व - संस्कार : माधुरी - दिसम्बर।

सन् १९२३ : परीक्षा - चांद - जनवरी ; राज्यभक्त - माधुरी - फरवरी ; नैराश्य - लीला : चांद - अप्रैल ; बौड़म - अप्रैल ; गृहदाह - जून ; आपबीती - माधुरी - जुलाई ; हजरतअली - प्रभा - जुलाई ; आभूषण - माधुरी - अगस्त ; कौशल - चांद - अगस्त ; सत्याग्रह : माधुरी : दिसम्बर।

सन् १९२४ : सैलानी बंदर - माधुरी - फरवरी ; नबी का नीति - निर्वाह ; सरस्वती मार्च ; वज्रपात - माधुरी - मार्च ; मुक्तिमार्ग - माधुरी - अप्रैल ; मुक्तिधन - माधुरी - मई ; क्षमा - माधुरी - जून ; सौभाग्य के कोड़े - जून ; निर्वासन - चांद - जून ; नैराश्य - चांद - जुलाई ; भूत - माधुरी - अगस्त ; दीक्षा- माधुरी - सितम्बर ; उद्धार - चांद - सितम्बर; शतरंज के खिलाड़ी - माधुरी - अक्तूबर ; विनोद- माधुरी - नवम्बर ; सवासेर गेहूं - चांद - नवम्बर ; तेतर - चांद - दिसम्बर।

सन् १९२५ : डिक्री के रूपये - माधुरी - जनवरी ; धिक्कार - २ : चांद - फरवरी ; नरक का मार्ग - चांद - मार्च; सभ्यता का रहस्य - माधुरी - मार्च ; मंदिर और मसजिद - माधुरी - अप्रैल ; विश्वास - चांद -अप्रैल ; भाड़े काट्टू - माधुरी - जुलाई ; माता का हृदय - चांद - जुलाई ; चोरी - माधुरी - सितम्बर ; स्वर्ग की देवी - सितम्बर ; दंड - चांद -अक्तूबर।

सन् १९२६ : लैला - सरस्वती - जनवरी ; शूद्रा - चांद - जनवरी ; मंत्र - १ : माधुरी- फरवरी ; कजाकी -माधुरी - अप्रैल ; प्रेमसूत्र - सरस्वती - अप्रैल ; लांछन - १ : माधुरी - अगस्त ; तांगेवाले की बड़ - ज़माना - सितम्बर; रामलीला - माधुरी -अक्तूबर ; निमंत्रण - सरस्वती - नवम्बर ; बहिष्कार - चांद - दिसम्बर ; हिंसा परमो धर्म - माधुरी - दिसम्बर।

सन् १९२७ : बड़े बाबू : बहारिस्तान - फरवरी ; शादी की वजह - ज़माना - मार्च ; सती - माधुरी - मार्च ; कामना - तरू : माधुरी - अप्रैल ; मंदिर - चांद- मई ; सुजान भगत - माधुरी - मई ; मांगे की घड़ी: माधुरी - जुलाई ; आत्म- संगीत: माधुरी - अगस्त; एक्ट्रेस - माधुरी-अक्तूबर।

सन् १९२८ : बोहनी - भारत ; अग्निसमाधि - विशाल भारत - जनवरी ; मोटेराम शास्त्री - माधुरी - जनवरी ; मंत्र- २: विशाल भारत - मार्च ; दो सखियां- माधुरी - मई ; पिसनहारी का कुआं - माधुरी - जून ;सुहाग का शव - माधुरी - जुलाई ; दारोगाजी - माधुरी - अगस्त ; अभिलाषा - माधुरी- अक्तूबर ; विद्रोही - माधुरी - नवम्बर ; आगा - पीछा : माधुरी - दिसम्बर; इस्तीफा - भारतेन्दु - दिसम्बर।

सन् १९२९ : प्रायश्चित - सरस्वती - जनवरी ; खुंचड़ - माधुरी - फरवरी ; गुल्लीदंडा- हंस - फरवरी ; न्याय -माधुरी - मार्च ; फातिहा - विशालभारत - मार्च; पर्वत - यात्रा : माधुरी - अप्रैल ; मां - माधुरी - जुलाई ; कानूनीकुमार - माधुरी - अगस्त ; अलग्योझा - माधुरी - अक्तूबर ; घरजमाई - माधुरी- नवम्बर ;

कवच - विशालभारत - दिसम्बर ; घासवाली - माधुरी - दिसम्बर।

सन् १९३० : दो कब्रें : माया : जनवरी ; धिक्कार - २ : चांद - फरवरी ; जुलूस - हंस - मार्च ; सुभागी - माधुरी- मार्च ; पत्नी से पति - माधुरी - अप्रैल; पूस की रात - माधुरी - मई ; समरयात्रा - हंस - अप्रैल ; मैकू - हंस - जून ; शराब की दूकान - हंस - मई ; आहुति - हंस - नवम्बर।

सन् १९३१ : उन्माद - माधुरी - जनवरी ; जेल - हंस - फरवरी ; लांछन - २ : माधुरी - फरवरी ; ढपोरशंख - हंस - मार्च ; आखिरी हीला - हंस - अप्रैल ; डिमांस्ट्रेशन - प्रेमा - अप्रैल ; होली का उपहार - माधुरी -अप्रैल , प्रेरणा - विशालभारत - मई ; प्रेम का उदय - हंस - जून ; आखिरी तोहफा - चंदन - अगस्त ; शाप/सैरे - दरवेश / - हंस - अगस्त; तावान - हंस - सितम्बर ; दूसरी शादी - चंदन - सितम्बर ; स्वामिनी - विशालभारत - सितम्बर ; सद्गति - मानसरावर - अक्तूबर; दो बैलों की कथा - हंस - अक्तूबर ; लेखक - हंस - नवम्बर ; सौत -२ : विशालभारत - दिसम्बर ।

सन् १९३२ : चमत्कार - माधुरी - मार्च ; गिला - हंस - अप्रैल कुत्सा -जागरण-जुलाई ; झांकी - जागरण - अगस्त ; ठाकुर का कुआं - जागरण -अगस्त ; कुसुम - चांद - अक्तूबर ; दामुल का कैदी - हंस- नवम्बर ; बेटोंवाली विधवा - चांद - नवम्बर।

सन् १९३३ : कायर -विशालभारत -जनवरी ; नेउर -हंस -जनवरी; वेश्या -चांद- फरवरी ; रसिक संपादक - जागरण -

मार्च ; बालक - हंस -अप्रैल ; ज्योति - चांद - मई ; कैदी - हंस - जुलाई ; ईदगाह - चांद- अगस्त ; दिल की रानी - चांद - नवम्बर।

सन् १९३४ : नशा - चांद - फरवरी ; शान्ति -२ : भारती- फरवरी ; मनोवृत्ति -हंस - मार्च ; रियासत का दीवान - हंस - मई ; जादू - हंस - मई ; दूध का दाम -हंस- जुलाई ; पंडित मोटेराम की डायरी - जागरण - जुलाई ; मुफ्त का यश - हंस - अगस्त ; बासी भात में खुदा का साझा-हंस -अक्तूबर ; खुदाई फोजदार -चांद- नवम्बर ; बड़े भाईसाहब - हंस - नवम्बर।

सन् १९३५ : देवी - चांद - अप्रैल ; स्मृति का पुजारी - हंस - अप्रैल ; जीवन का शाप - हंस - जून ; गृहनीति - चांद - अगस्त ; पैपूजी - माधुरी - अक्तूबर ; लाटरी - हंस - अक्तूबर।

सन् १९३६ : दो बहनें - माधुरी - अगस्त ; कफ़न - जामिया।

सन् १९३७ : क्रिकेट मैच - ज़माना - जुलाई। [३३]

यद्यपि आलोचक ''कफ़न'' को प्रेमचन्द की अन्तिम कहानी मानते हैं, तथापि उपर्युक्त सूची तक ज्ञापित होता है कि उनकी अंतिम कहानी उनकी मृत्यु के एक वर्ष पश्चात् सन् १९३७ के जुलाई महीने में ज़माना में प्रकाशित हुई थी। बहुत संभव है कि उनके निधन के उपरांत दूसरे वर्ष उनकी जन्म - तिथि पर उनकी मृत्यु - पूर्व लिखी यह कहानी ज़माना के संपादक ने प्रकाशित करवायी हो। उपर्युक्त सूची के अनुसार यहां प्रेमचन्द की कुल २२४ कहानियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि उन्होंने लगभग २५० के करीब कहानियां लिखी हैं।

प्रेमचन्द द्वारा प्रणीत उल्लिखित तमाम कहानियों के समग्रावलोकन से कुछ तथ्य प्रत्यक्षतः सामने आते हैं। प्रेमचन्द अपनी कहानी-यात्रा में

आदर्शवाद, आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद, से अंततः यथार्थवाद की ओर अग्रसरित हुए हैं। उसी प्रकार विचारधारा की दृष्टि से आर्यसमाजी विचारधारा और गांधीवादी विचारधारा से होते हुए मार्क्सवादी विचारधारा की ओर उनका अभिगम हुआ हो ऐसा प्रतीत होता है। इतना तो स्पष्ट है कि उनके समग्र लेखन के केन्द्र में मानवतावादी - जनवादी अभिगम साफ झलकता है। प्रेमचन्द मानवीय मूल्यों के लेखक हैं। न्याय और विवेक उनकी चेतना के केन्द्र में है अपनी -अपनी कहानियों के द्वारा उन्होंने अन्याय , अत्याचार , असमानता और शोषण के खिलाफ आवाज़ उठाई है।

आचार्य रामचन्द शुक्ल ने कहीं लिखा है कि वही कवि प्रबंधकाव्य की रचना में सफल हो सकता है जिसे लोक-हृदय की पहचान हो, जो लोगों की नब्ज़ को भली-भाँति पहचानता हो। यही बात हम कथासाहित्य के संदर्भ में कर सकते है कि वही कथाकार सफलतम जीवंत कहानियों को लिख सकता है जिसका लोकजीवन से गहरा सरोकर हो। प्रेमचन्द-रेणु, नागार्जुन, शैलेश मटियानी आदि ऐसे कथाकार है जिनकी जनजीवन में गहरी पेठ है। जो लोगों से अलग नहीं, बल्कि लोगों में से एक है। अतः उनके लेखन में प्रामाणिक्ता और विश्वसनीयता दृष्टिगोचर होती है।

प्रेमचन्द ने कहानी साहित्य को उस ऊँचाई तक पहुँचाया है जहाँ से हम गोर्की, मोपांसा, चेखव, हार्डी, फारस्टर, सआदत , हसन मंटो, इस्मत चुगताई, कृर्त-उल-एन हैदर, असगर वजाहत जैसे कथाकारों के वातावरण को झांक सकते है।

कथाकार जनजीवन से विमुख नहीं हो सकता। समसामयिक समस्याओं से विमुख नहीं हो सकता , असामयिक या अप्रासंगिक होने के खतरे से वह अपने समय के सत्य को से मुँह नहीं मोड़ सकता। केवल शाश्वत सनातन मूल्यगत विषयों द्वारा नहीं, अपितु समसामायिक समस्याओं को शाश्वत मूल्यों से जोड़कर वह अपना कथापट बुनता है। कीचड़ में कमल खिलाना ही उसकी कला है। उसका सौंदर्यशास्त्र भी अलग होता है

और वहाँ पर वह वैश्विक स्तर के साहित्यकारों से गोष्ठी करता हुआ दृष्टिगत होता है । इन अर्थों में प्रेमचन्द न केवल हिन्दी के कहानीकार हैं , किन्तु विश्वसाहित्य के भी कहानीकार हैं ।

आधुनिक मानवतावादी चेतना प्रेमचन्द की कहानी लेखन का लक्ष्य है । परिणामतः नारी-विमर्श, दलित-विमर्श, सामाजिक न्याय विमर्श, हिन्दु-मुस्लिम ऐक्य विमर्श जैसे आधुनिक सामाजिक जीवन के कतिपय मुद्दे उनकी कहानियों में उभरकर आये हैं । नवजागरणकाल के प्रारंभ में ही नारी-विमर्श से सम्बद्ध नारी शिक्षा, अनमेल विवाह, वृद्धविवाह, वेश्या समस्या, दहेज समस्या जैसे मुद्दे उनकी कहानियों में उपलब्ध होते हैं । अपने युग को उन्होंने इस कदर प्रभावित किया है कि प्रेमचन्द युग के तमाम कहानीकारों ने उपयुक्त विषयों को लेकर कहानियों की रचना की है ।

प्रेमचन्द की नारी-विमर्श की कहानियों में ''बड़े घर की बेटी'',''रानी सारंधा'',''ममता'',''अनाथ लड़की'',''सौत'',''बेटी का धन'',''बूढ़ी काकी'',''माता काहृदय'',''दोसखियां'',''सुभागी'', ''कुसुम'' ,''देवी'',''दो बहनें '',''बेटोंवाली विधवा'' आदि कहानियों को लिया जा सकता है । इन कहानियों में प्रेमचन्द ने भारतीय नारी की महिमा, करूणा, उदारता, उसका वात्सल्य भाव, उसका गौरव इत्यादि को जहाँ रेखांकित किया है; वहाँ दूसरी ओर उस पर धर्म और शास्त्र द्वारा जो निर्योग्यताएँ थोपी गई हैं उनका संकेत देते हुए उन पर होनेवाले अत्याचारों और शोषण को भी बेपर्द किया है ।

नारी-विमर्श के उपरांत प्रेमचन्द के कहानी साहित्य में दलित-विमर्श उभरकर आया है । हमारे शोध-प्रबंध का सीधा सरोकार इस दलित-विमर्श से है, अतः पुनारवृत्ति दोष से बचने के लिए, यहाँ केवल कुछेक दलित-विमर्श की कहानियों का उल्लेखभर कर दिया है । दलित- विमर्श की ये कहानियाँ है --''गरीब की हाय '',''मंदिर'',''सद्गति'',''ठाकुर का कुआँ'',''सौभाग्य के कोड़े'',''दूध का दाम'',''सुजान

भगत'',''गुल्ली डंडा'',''मंत्र'',''सवा सेर गेहूँ'',''कफ़न '' आदि-आदि ।

प्रेमचन्द समाजवादी-जनवादी लेखक होने के नाते सदैव सामाजिक प्रश्नों से जूझते रहे हैं । अतः सामाजिक न्याय का मुद्दा यदि उनके कहानी लेखन के केन्द्र में है तो उसे अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। प्रेमचन्द प्रारंभ से ही ऊँच-नीच के विचारों के खिलाफ रहे हैं । जाति व्यवस्था के विरोधी हैं। अतः जातिव्यवस्था का मूलाधार ऐसी वर्णव्यवस्था के भी वे खिलाफ़ हैं। ''पंडित मोटेराम शास्त्री '' कहानी के संदर्भ में उन पर जो मुकदमा चला था और जिसके कारण तत्कालीन हिन्दी जगत के कुछ जातिवादी धुरंधरों ने उनको ब्राह्मणविरोधी करार दिया था, तब उसके उत्तर में प्रेमचन्दजी ने कहा था -- ''लेखक की दृष्टि में ब्राह्मण कोई समुदाय नहीं , एक महान पद है जिस पर आदमी बहुत त्याग, सेवा और सदाचरण से पहुँचता है। हरेक टकेपंथी पुजारी को ब्राह्मण कहकर मैं इस पद का अपमान नहीं कर सकता। ''[३४] प्रेमचन्द की सामाजिक न्याय विषयक कहानियों में ''पाप का अग्नि कुंड'', ''गरीब की हाय'', ''कर्मों का फल'', ''नेकी'',''पछतावा'',''पंच परमेश्वर'',''सज्जनता का दंड'',''मनुष्य का परम धर्म'',''सवा सेर गेहूँ'',''सुजान भगत'',''मोटेराम शास्त्री'',''न्याय'', ''पं. मोटेराम की डायरी'' आदि कहानियों को रेखांकित किया जा सकता है।

भारत में मुसलमानों के आगमन के पश्चात हिन्दु-मुसलिम वैमनस्य की समया हमेशा मुँहबाए रही है । दुश्मनावट और नफ़रत की इस खाई को पाटने का कार्य कबीर-नानक आदि संतो ने तथा मलिक मुहम्मद जायसी जैसे सूफी कवियों ने किया है। वस्तुतः कबीर को हम अपनी परम्परा का प्रथम बिन-सांप्रदायिक (Secular) कवि कह सकते हैं । अंग्रेजी शब्द secular का सही अनुवाद धर्मनिरपेक्षता न होकर बिनसांप्रदायिक्ता होना चाहिए ऐसा मेरा नम्र अभिमत है । कबीर ने हिन्दु-मुसलमान दोनो को उनके गलत तौरतरीकों के लिए फटकारा है । उसमें वे किसी प्रकार का लिहाज़ नहीं रखते । संतो और सूफियों के पश्चात आधुनिक काल में यह

कार्य प्रेमचन्द तथा प्रेमचन्द स्कूल के कथाकारों तथा प्रगतिवादी लेखकों ने किया है। स्वाधीनता संग्राम के दौरान तथा गांधीवादी चिंतन के तहत हिन्दु-मुस्लिम एकता का मुद्दा एक अहम मुद्दा बनकर उभर आया है। प्रेमचन्द की अनेक ऐसी कहानियां मिलती है जिनमें इस मुद्दे को भलीभाँति उकेरा गया है। शेख मखमूर, पंच परमेश्वर, दफतरी कहकसाँ, हजरत अली, नबी का नीति निर्वाह, मंदिर और मस्जिद, दारोगाजी, फातिहा, मैकू, ईदगाह, बासी भात में खुदा का साजा, खुदाई फौजदार आदि ऐसी कहानियां हैं जिनमें यह विमर्श हमें मिलता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रेमचन्द जितने महान उपन्यासकार हैं उतने ही महान कहानीकार भी हैं। उन्होंने हिन्दी कहानी साहित्य को एक दिशा प्रदान की है। कल्पना प्रसूत सौंदर्यलोक के स्थान पर यथार्थ की कठोरभूमि को न केवल उन्होंने प्रस्तुत किया बल्कि पाठकों तथा लेखकों में इस नये रूझान के प्रति रूचि भी पैदा की। वे सचमुच में युगनिर्माता साहित्यकार हैं।

हिन्दी कहानी को शैलेश मटियानी का योगदान :---

शैलेश मटियानी प्रेमचन्दोत्तरकाल के एक प्रमुख एवं सशक्त कहानीकार हैं। सन् १९५४ से उनका कहानी लेखन आरंभ होता है। अभी पिछले वर्ष २४, अप्रैल २००१ करे उनका निधन हुआ तब "हंस" में उनकी कहानी "उपरांत" प्रकाशित हुई थी। अभिप्राय यह कि सन् १९५४ से सन् २००१ तक उनकी कहानीयात्रा अनवरत चलती रही है। उपन्यासों के लेखन में अंतराल आये हैं। परंतु कहानी लेखन तो लगभग चलता ही रहा है। पिछले कुछेक वर्षों से उनकी शारीरिक मानसिक अवस्था अच्छी नहीं थी। पुत्र हत्या के बाद तो वे पूरी तरह से टूट चुके थे। मटियानीजी अदम्य मानवीय आस्था के लेखक हैं। प्रेमचन्दजी ने ग्रामीण जीवन को उसके मध्य, निम्न, गरीब वर्ग को, उनकी समस्याओं को लिया है किन्तु

मटियानीजी ने तो जीवन के निम्नतम से निम्नतम तबके के गर्हनीय जीवन के कुष्ठ को आत्मसात करते हुए अपने कहानी साहित्य में उसे उकेरा है। महानगरीय जीवन की विकलांगता के वे स्वयं साक्षी रहे हैं। प्रेमचन्दजी के जीवन में आर्थिक संघर्ष मिलता है परंतु उनको होटलो में जूंठे बर्तन साफ नहीं करने पड़े थे। झुग्गी - झोंपडिओं में नहीं रहना पड़ा था। महानगरों के फुटपाथों पर पलनेवाली जिन्दगी के अनुभव उनके पास अधिक नहीं थे। गुंडे, मवाली, दादा, झोंपडपट्टी की वेश्याएँ, भिखमंगे, कोढ़ी, जेब कतरे, चाकूबाज और छूरेबाज लोंगो से उनका वास्ता कम ही पड़ा था। इस दृष्टि से विचार करें तो उनके पास जीवन का जो अनुभव है, वह आतंकित और भयभीत करनेवाला है। इस नरक से गुजरने के बाद भी उनके मन में मानवता और मानवीय मूल्यों के प्रति जो आस्था है उससे उनके एक महान लेखक होने की प्रतीत होती है।

मटियानीजी का विश्वास था कि साहित्यकार को सिर्फ कृतित्व के ही नहीं प्रत्युत् व्यक्तित्व के निकष पर भी आंकना आवश्यक है। उन्होंने लिखा है ---"मैं साहित्यकार का दायित्व अपने और अपने कृतित्व के लिए यशार्जन तक ही सीमित नहीं मानता है, प्रत्युत् यह भी प्रत्येक साहित्यकार का कर्तव्य होता है, कि वह कृतित्व और व्यक्तिव के माध्यम से अपने समसामयिक और आगत पीढ़ियो के रचनाकारों को ऐसी प्रेरणा दे कि वे कटुतर संघर्ष के क्षणों में भी अपने स्वधर्म के लिए आस्था जुटा सके। साहित्य-सृजन और यशार्जन के "गुरूों" को अपनी छाती में ही दबोचे रखना नहीं, प्रत्युत् अपने अनुभवों को औरों के सामने उन्मुक्त-मन लेखनी से प्रस्तुत करके, उनकी संभावनाओं के मार्ग को भी प्रस्तुत करना साहित्यकार का कर्तव्य होता है।"[३५]

अपने जीवन-संघर्ष के संदर्भ में मटियानीजी लिखते है --"लेखक और व्यक्ति के नाते, मेरा अब तक का जीवन संघर्षपूर्ण रहा है। इतना संघर्षपूर्ण कि सिर्फ दो ही संभावनाएँ थी। पहली यह कि मैं संघर्षों से तिल-तिल टूट कर, छितराकर, समाप्त हो जाता। दूसरी यह कि जितना

कटु-प्रखर जीवन मुझे जीना पड़ा, वह साहित्यकार बनने की दिशा मे मेरे लिए एक वरदान सिद्ध हो ।''[३६] अब असंग्धितया कहा जा सकता है कि वह कटु प्रखर संघर्षपूर्ण जीवन मटियानी जी के लेखक के लिए अवश्य वरदान सिद्ध हुआ है ।

अपनी धरती, अपनी मिट्टी के प्रति, एक विशेष लगाव होने के कारण मटियानीजी की अधिकांश कहानियों का परिवेश कुमाऊँ प्रदेश है । एक तरफ जहाँ वे कुमाऊँ की सुंदर धरती पर पले-बड़े हैं, बाद में भी उससे जुड़े रहे हैं, वहाँ दूसरी तरफ आजीविका के लिए उन्होंने दिल्ली, मुंबई जैसे नगरों की खाक छानी है और दर-दर की ठोकरें खाई हैं । यही कारण है कि उनकी कहानियों में एक तरफ जहाँ आंचलिकता के तत्व मिलते हैं, वहाँ दूसरी तरफ नगरीय जीवन के विभिन्न आयाम भी दृष्टिगत होते हैं । उनकी कहानियों में भोगे हुए यथार्थ के कटु अनुभवों की कडुआहट मिलती है । उनकी कहानियों में जहाँ धरती- पार्वती का प्रेम मिलता है वहाँ दूसरी तरफ समाज द्वारा प्रताड़ित और शोषित ऐसे लोग मिलते हैं जो गर्हित जीवन के नरक को भोगने के लिए विवश हैं । इनमें ऐसे पात्र हैं जो समय और समाज की मार से अपनी नैतिक चेतना खो चुके हैं । ऐसे पात्रों में जेलयाफता, उठाईगिरे, जेबकतरे, भिख़मंगे, वेश्याएँ जैसे पात्र मिलते हैं । जिस प्रकार एमिलजोला की पात्र सृष्टि में गर्हित से गर्हित जीवन जीनेवाले लोगों में कहीं-कहीं इन्सानियत का दिया झिलमिलता हुआ नज़र आता है, ठीक उसी प्रकार मटियानीजी के ऐसे पात्रों में भी हमें कई बार ऊँचे मानवीय मूल्यों के दर्शन होते हैं । अतः ऐसे पात्रों की मानसिक पहचान के लिए हमें नये सौंदर्यबोध और नये नैतिक बोध को तलाशना होगा । ''मेरी तैंतीस कहानियाँ'' की भूमिका में लेखक अपनी कहानियों की चरित्रसृष्टि के संदर्भ में लिखते हैं ---

''मेरे लेखन में जो तथाकथित उग्रता, अभद्रता और अश्लीलता है ; वह पूँजीवादी व्यवस्था के अंतर्गत होनेवाले शोषण के तरीकों से कहीं बहुत अधिक मर्यादित, शिष्टश्लील हैं । हिन्दी के अन्य लेखकों की

तुलना में यदि मेरी रचनाओं में अधिक आक्रोश और बौखलाहट है, तो उसका एक मात्र कारण यह है कि मैंने आर्थिक और नैतिक अव्यवस्थाओं के दुष्परिणामों को देखा-सुना ही नहीं, प्रत्युत सीधे भोगा भी है।'' [३७]

मटियानीजी की लगभग १५० के करीब कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। इनकी इधर की कुछ कहानियाँ जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, उनके अतिरिक्त उनकी पहले की कहानियाँ निम्नलिखित कहानी संग्रहो में संकलित हैं :-

(१) मेरी तैंतीस कहानियाँ (आत्माराम एन्ड सन्स, दिल्ली)
(२) चील (अक्षर प्रकाशन; दिल्ली)
(३) हारा हुआ (विकल्प प्रकाशन,इलाहाबाद)
(४) भेड़े और गड़रिये (साहित्य भंडार, इलाहाबाद)
(५) बर्फ की चट्टानें - छोटा संस्करण (मुदिता प्रकाशन, इलाहाबाद)
(६) दो दुःखों का एक सुख (विकल्प प्रकाशन, इलाहाबाद)
(७) अतीत तथा अन्य कहानियां (विकल्प प्रकाशन, इलाहाबाद)
(८) सफर पर जाने से पहले (विकल्प प्रकाशन, इलाहाबाद)
(९) छिददा पहलवानवाली गली (शारदा प्रकाशन, इलाहाबाद)
(१०) सुखा सागर (शारदा प्रकाशन, इलाहाबाद)
(११) त्रिज्या (विभा प्रकाशन, इलाहाबाद)
(१२) अहिंसा तथा अन्य कहानियाँ (साहित्य भंडार, इलाहाबाद)
(१३) पापमुक्ति तथा अन्य कहानियाँ (विकल्प प्रकाशन, इलाहाबाद)
(१४) भविष्य तथा अन्य कहानियाँ (मुहिम प्रकाशन, गाज़ियाबाद)
(१५) सुहागिन तथा अन्य कहानियाँ (अनुभूति प्रकाशन, इलाहाबाद)
(१६) बर्फ की चट्टानें-बड़ा संस्करण (सचीन प्रकाशन, नई दिल्ली)

उपर्युक्त कहानी संग्रहों में से ''मेरी तैंतीस कहानियाँ ''

तथा "बर्फ की चट्टानें- बड़ा संस्करण" क्रमशः २१९ और ६२१ पृष्ठों के बृहदकाय संकलन हैं। इन दो संग्रहों में मटियानी जी की अधिकांश कहानियों का समावेश हो जाता है। "मेरी तैंतीस कहानियाँ" उनका प्रथम कहानी संग्रह है उसमें निम्नलिखित ३३ कहानियां संग्रहीत हैं : -

(१) भावना की सत्ता (२) वह तू ही था (३) इल्लेस्वामी (४) जिसकी जरूरत नहीं थी (५) तथ्य और सत्य (६) किसी से न कहना (७) मौत का सामान (८) चिथड़े (९) सिने-गीतकार (१०) प्रेरणा की पूँजी (११) छोटी मछली : बड़ी मछली (१२) शुक बोला (१३) आदि और अंत (१४) दैट माई फादर बालजी (१५) विट्ठल (१६) एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट (१७) कालिका अवतार (१८) रमौती (१९) फर्क,बस,इतना है (२०) पोस्ट मैन (२१) गरीबुल्ला (२२) लीक (२३) हमपेशा (२४) पत्थर (२५) बाली-सुग्रीव (२६)हरकू हौलदार (२७) गंगादास वल्द जमनादास (२८) बत्तीस दाँतों को टकरानेवाला पहाड़ी सेव (२९) कीर्तन की घुन (३०) बारूद और बच्ची (३१) जिबूका (३२) लेखक का विज्ञापन (३३) दशरथ।

इन कहानियों में हमें शिल्प-शैली की दृष्टि से पर्याप्त वैविध्य मिलता है। भावना की सत्ता, प्रेरणा की पूँजी, आदि और अंत आदि पत्रात्मक शैली की कहानियां है। वह तू ही था, किसी से ना कहना, शुकबोला आदि कहानियां लोककथा के तत्व पर आधारित हैं। कुछ कहानियाँ चरित्र-प्रधान हैं, जैसे- इल्लेस्वामी, रमैती, विठ्ठल, पोस्टमेन, गरीबुल्ला, हरकू हौलदार, जिबूका, दशरथ आदि। कुछ कहानियों में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की झांकी मिलती है, जैसे-- तथ्य और सत्य , किसी से न कुछ कहना, छोटी मछली : बड़ी मछली। प्रस्तुत संग्रह की कुछ कहानियों में हमें आँचलिकता के तत्व मिलते हैं, जैसे -- कालिका अवतार, रमौती, पोस्टमेन, लीक, बाली-सुग्रीव, हरकू हौलदार, बारूद और बच्ची, जिबूका, दशरथ आदि। मटियानीजी की कहानियों में व्यंग्य का तत्व शुरू से ही मिलता है। जिसकी जरूरत नहीं थी, किसी से न कहना, चिथड़े, सिने-गीतकार, "एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट", फर्क , बस, इतना

है, लीक, हमपेशा, गंगादास वल्द जमनादास, बत्तीस दाँतो को टकरानेवाला पहाड़ी सेव, लेखक का विज्ञापन जैसी कहानियों को व्यंग्य की दृष्टि से रेखांकित कर सकते हैं। मटियानीजी ने में यह व्यंग्य कारूणिक मुद्रा में प्रगट हुआ है। इल्लेस्वामी, मौत का सामान, चिथड़े, सिने-गीतकार, दैट माई फदार बालजी, "एक कप चा : दो खारी बिस्किट", हमपेशा, जैसी कहानियों में अभिव्यंजित व्यंग्य अपने कारूणिक स्पर्श के कारण विशेष संवेद्य बन पड़ा है। मटियानीजी में कहीं - कहीं एबसर्ड शैली का प्रयोग भी मिलता है। इस दृष्टि से "दैट माई फादर बालजी " कहानी के शिल्प को देख सकते हैं।

जैसे कि उपर निर्दिष्ट किया गया है, मटियानीजी की अधिकांश कहानियाँ उल्लिखित संकलनद्वय में संग्रहीत हैं। प्रकाशकीय या लेखकीय सुविधा या विवशता के कारण इनमें कई-कई कहानियां दो-दो, चार-चार, बार विभिन्न कहानी संगहों में प्रकाशित हुई हैं। मटियानीजी के पास कोई नौकरी नहीं थी। दूसरे उनको अपनी पत्रिकाओं के विज्ञापनों के लिए भी खूब दौड़धूप करनी पड़ती थी। अतः केवल मसीजीवी होने के कारण उनको यह करना पड़ा था। उदाहरणार्थ "वह तू ही था ", "लीक", "बाली और सुग्रीव", "दशरथ", "कालिका का अवतार" जैसी कहानियां आपको "मेरी तैंतीस कहानियों "में भी मिलेंगी और "बर्फ की चट्टानें " में भी मिलेंगी। इस तरह "बर्फ की चट्टानें", "सीने में धँसी आवाज़", "भेंडे और गड़रिये", "प्रेत मुक्ति", "पाप मुक्ति", "सुहागिनी" आदि कहानियां "बर्फ की चट्टानें " में भी हैं और अन्यत्र दूसरे संकलनों में भी हैं। कहीं - कहीं तो एक ही कहानी के दो-दो शीर्षक भी मिलतें हैं ; जैसे "सावित्री ", "झुरमुट ", "एक शब्दहीन नदी ", आदि कहानियां "बर्फ की चट्टानें"(बड़ा संकलन) संकलन में संग्रहीत हैं। और अन्यत्र इन्हीं कहानियों के क्रमशः "गृहस्थी", "कठफोड़वा" और "एक सागर" आदि शीर्षक उपलब्ध होते हैं। किन्तु मोटेतौर पर यदि विचार किया जाय तो मटियानीजी के

समग्र कहानी- साहित्य को हम दो वर्ग में विभक्त कर सकते हैं -- एक पहाड़ी परिवेश की कहानियां और दो नगरीय परिवेश की कहानियां।

मटियानीजी की पहाड़ी परिवेश की प्रायः सभी कहानियां "बर्फ की चट्टानें" (बड़ा संकलन) कहानी - संग्रह में संकलित हैं। यह एक बृहद्काय कहानी संकलन है। मटियानीजी की पहाड़ी परिवेश की कहानियों को यदि एक साथ पढ़ना हो तो यह कहानी-संग्रह उपयोगी हो सकता है। इस बृहद् कहानी-संग्रह में निम्नलिखित कहानियां संकलित हैं --

(१) पोस्टमेन (२) वह तू ही था (३) आन-बान (४) लीक (५) भँवरे की जात (६) लोकदेवता (७) बर्फ की चट्टानें (८) चिट्ठी के चार अक्षर (९) उसने तो नहीं कहा था (१०) सीने में धँसी आवाज़ (११) बिना पूँछ के हनुमान (१२) बाली-सुग्रीव (१३) दशरथ (१४) सतजुगिया आदमी (१५) घर गृहस्थी (१६) कुसुमी (१७) नंगा (१८) सावित्री (१९) गोपुली-गफूरन (२०) कालिका-अवतार (२१) अंतिम-तृष्णा (२२) वीरखंभा (२३) आकाश कितना अनंत है (२४) पुरखा (२५) काला कौआ (२६) झुरमुट (२७) एक शब्दहीन नदी (२८) भेंडे और गड़रिये (२९) नेताजी की चुटिया (३०) ऋण (३१) मेरा एकलव्य (३२) खरबूज़ा (३३) बित्ताभर सुख (३४) रहमतुल्ला (३५) जिबूका (३६) संस्कार (३७) कपिला (३८) भस्मासुर (३९) रूका हुआ रास्ता (४०) मिसेज ग्रीन वुड (४१) चुनाव (४२) पाप मुक्ति (४३) लाटी (४४) पुरोहित (४५) प्रेतमुक्ति (४६) सुहागिनी (४७) उत्तरापथ (४८) असमर्थ (४९) दो दुःखों का एक सुख (५०) हलाल (५१) घुघुतिया त्यौहार (५२) छाक (५३) इतिहास (५४) अर्घांगिनी।

उपर्युक्त कहानियों में जहाँ तक दलित- जीवन का सम्बन्ध है "लीक", "चिट्ठी के चार अक्षर ', "सीने में धँसी आवाज़", "सतजुगिया आदमी", "नंगा", "गोपुलीगफूरन", "मेरा एकलव्य", "रहमतुल्ला", "जिबूका", "कपिला", "रूका हुआ रास्ता", " लाटी", "प्रेतमुक्ति", "दो दुःखों का एक सुख", "हलाल " प्रभृति कहानियों

में वह संदर्भ मिलता है। मटियानीजी अलमोड़ा जिल्ले के बाड़ेछीना गाँव के निवासी है। उनका बचपन वहीं व्यतीत हुआ है। अतः बाड़ेछीना, राय छीना, भोगाँव, कमस्यारी, भुवाणी, रतन्यारी जैसे गाँवो के कई किस्से कहानियों से उन्हें स्वयं गुजरना पड़ा है। यही कारण है कि उनके लेखन में पहाड़ी परिवेश की कहानियों का दायरा बड़ा है।

मटियानीजी के कुछ कहानी-संग्रहों में जो कहानियां संकलित हैं उनका उल्लेख नीचे किया जा रहा है --

(१) सुहागिनी तथा अन्य कहानियां -- कठफोड़वा, लाटी, काला कौआ, पुरखा , वापसी, अंतिम तृष्णा, ऋण, वीरखंभा, घर-गृहस्थी, एक शब्दहीन नदी, सुहागिनी = ११ कहानियां।

(२) अतीत तथा अन्य कहानियां -- अतीत, भय, मोहभंग, स्मरण, सहानुभूति, असुविधा, योद्धा, दीक्षा = ८ कहानियां।

(३) पापमुक्ति तथा अन्य कहानियां -- नाबालिग, खरबूजा, गृहस्थी, कुसुमी, गोपुलीगफूरन, संस्कार, शीशे के पार, एक बदलता हुआ परिदृश्य, निर्णय ले चुकने के बाद, पतझड़ के मौसम में, पापमुक्ति = ११ कहानियां।

(४) अहिंसा तथा अन्य कहानियां -- अहिंसा, सदाशयी बाबू, उत्तरापथ, भाषा, जुलूस, बिद्दू अंकल, अर्द्धांगिनी = ७ कहानियां।

(५) भविष्य तथा अन्य कहानियां -- अर्द्धांगिनी, इतिहास, चील, मैमूद, रहमतुल्ला, महाभोज, भविष्य, नाच जमूरे नाच ! = ८ कहानियां।

(६) बर्फ की चट्टानें -- (छोटा संग्रह) - चिट्ठी के चार अक्षर, लोकदेवता, उसने तो नहीं कहा था, अपनी-अपनी परम्परा, सीने में घँसी आवाज़, बर्फ की चट्टानें = ६ कहानियां।

(७) सफर पर जाने से पहले -- सफर पर जाने से पहले, सुख, नियति, असुविधा, निर्णय, सीखचों पर अटका अतीत, प्रकृति, तीसरा सुख = ८ कहानियाँ।

(८) त्रिज्या -- चील, मैमूद, व्यास, प्रेतमुक्ति, इब्बूमलंग, भय,

मिट्टी, भविष्य, रहमतुल्ला = ९ कहानियां।

(९) हारा हुआ -- इब्बूमलंग,घोड़े, ब्राह्मण, व्यास, संस्कृति, धारणा, हारा हुआ = ७ कहानियां।

(१०) छिद्दा पहलवानवाली गली -- छिद्दा पहलवानवाली गली, दीक्षा, महाभोज, रहमतुल्ला, हत्यारे, भय, शरीफ़ों का महोल्ला = ७ कहानियां।

(११) सूखा सागर -- सूखा सागर, अंतिम तृष्णा, मिसेज ग्रीन वुड, नीत्शी, चुनाव, असमर्थ, बित्ता-भर सुख, हाथी दाँत की मीनार, दीक्षा, बाली-सुग्रीव, दशरथ, गरीबुल्ला, भय, कपिला, नाबालिग, वापसी, अतीत = १७ कहानियां।

उपर्युक्त संकलनों की कहानियों के अतिरिक्त बर्फ की चट्टानें (बड़ा संकलन) - मेरी तैंतीस कहानियां तथा अन्यत्र पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियों को मिलाकर कुल लगभग २०० कहानियां होती हैं। किन्तु जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है उनकी कई कहानियां अलग-अलग संकलनों में पुनः पुनः प्रकाशित होती रही हैं, अतः उनकी कुल कहानियां लगभग १००-१५० के करीब बैठती हैं।

परंतु किसी भी कहानीकार का मूल्यांकन उसने लिखी कहानियों की संख्या के आधार पर न होकर कहानियों की गुणवत्ता के आधार पर होता है और यहाँ पर मटियानी जी हिन्दी के कुछेक श्रेष्ठ कहानीकारों की पंक्ति में बिराजित होते हैं। राजेन्द्र यादव ने अपने समय के श्रेष्ठ कहानीकारों का एक संकलन ''एक दुनिया समानांतर'' नाम से प्रकाशित किया था। उसमें मटियानी जी की '' प्रेतमुक्ति'' को स्थान दिया गया है।

मटियानीजी की कहानियों के संदर्भ में हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकार हृदयेशजी ने लिखा है -''अभी कुछ दिन पूर्व ''रविवार'' वाली आपकी कहानी ''जुलूस'' पढ़ी थी। अच्छी लगी थी। किन्तु जब अभी लम्बी कहानी ''अहिंसा '' पढ़ी, तो वह कहानी बहूत दूर चली गई। वर्षों से हिन्दी क्या, दूसरी भाषाओं की भी इतनी सशक्त, पूरी रचनाधर्मिता से

लिखी और लक्ष्य की ओर सधी हुई कहानी नहीं पढ़ी। आपकी कहानियों में भी यह सबसे आगे है। यह हिन्दी की एक उपलब्धि कहानी है। इस कहानी से आप चर्चा के केन्द्र में आ जायेंगे। ऐसा होना भी चाहिए। आपके प्रति पहले भी आदर-भावना थी, अब और हो गई।"[३८]

हिन्दी के एक अन्य दिग्गज कथाकार, पत्रकार तथा समीक्षक राजेन्द्र यादव मटियानीजी के संदर्भ में लिखते हैं -"अर्द्धांगिनी" कहानी को पढ़ना सचमुच एक पवित्र और उच्चस्तरीय अनुभव से गुजरना है। यही मानसिकता तुम्हारी (मटियानीजी) "अहिंसा" कहानी में भी थी, जिसे तोड़ देनेवाले व्यक्ति के लिए तुमनें मौत की सजा चुनी थी। जिन रचनाओं को पढ़कर आदमी किसी शुभ्र नदी में स्नान की अनुभूति करता है उनमें "अर्द्धांगिनी" भी एक है। वही अनुभूति जो टोलस्टोय की रचनाएँ पढ़कर होती है।"[३९]

अतः कहा जा सकता है कि मटियानीजी हिन्दी के एक सशक्त कहानीकार हैं। किन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि उनकी भरपूर उपेक्षा हुई है। हिन्दी कहानी साहित्य के अधिकांश आलोचकों ने आँचलिक कथाकार के खाते में डालकर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर ली है। जहाँ दूसरे व्यवसायधर्मी कहानीकार विभिन्न कहानी आंदोलनों के फतवों से जुड़ते रहे, वहाँ मटियानीजी इनसे दूर रहे हैं। इसके कारण तात्कालिक लाभ-हानि की दृष्टि से उन्हें काफ़ी नुकशान हुआ है, परंतु दूसरी तरफ नारेबाजियों, फतवों, कला आंदोलन, फैशनों से अलग रहने के कारण उनके रचनाकार को असीम शक्ति मिलती रही है। मटियानीजी इस बात पर विश्वास करते हैं कि कहानी में केवल "कहानीपन" होना चाहिए। कहानी के संदर्भ में उनका कथन है - "समस्त सृजनात्मक कलाएँ एक आदमी की कहानी कह सकने से ही जुड़ी हैं; कहानी सिर्फ आदमी की हो सकती है और आदमी ही कहानी कह सकता है। कहने के प्रकार जरूर भिन्न हैं।"[४०]

कहानी कहना कितना कठिन है उसके संदर्भ में कुमाऊँ की

लोकबोली में निम्नलिखित पंक्तियां मिलती हैं -- "कौ लाटा काथ-बाथा/ सुण काला तु/ काणैले चोरि करी/ दौड़ डुणा तु।"[४१] अर्थात् - गूंगे तुम कहानी कहो। बहरे तुम इसे सुनो। अंधा चोरी करके भाग गया है। लंगडे तुम इसे दौड़कर पकड़ लो। इससे प्रतीत होता है कि कहानी कहना कितना कठिन काम है। आदमी को कहना समुद्र और आकाश को कहने जैसा है। जितना कहो उसे, उतना ही "और कहो" "और कहो" कहेता सुनाई पड़ेगा। मटियानीजी इस संदर्भ में कहते है - "कहानी लिखना आदमी को लिखना बन जाय, तब ही माना जा सकता है कि उसे पढ़ते हुए आदमी को पढ़ रहे होने की अनुभूति हो सकेगी। तब ही जाना जा सकेगा कि आदमी के पृष्ठ अपार हैं और इस अपार की ओर इशारा करना ही कहानी की भूमिका बाँधना हैं।"[४१]

कहानी के संदर्भ में इतनी ऊँची उड़ान, इतनी ऊँची परिकल्पना, इतनी ऊँची विभावना से यह प्रभावित होता है कि कहानी के संदर्भ में मटियानीजी का लक्ष्य काफी ऊँचा है। और उन्होंने अपने इन परिमाणों पर खरा उतरने की भरसक कोशिश की है। उनकी कहानियों में प्रेमचन्द की ही भाँति मानवीय स्पर्श ,मानवीय पीड़ा और मानवीय सरोकर द्रष्टिगत होते हैं। लेखक के पास एक मानवीय दृष्टि है। किसी भी प्रकार के संकीर्ण वादों और विवादों के घेरों से अलग रहकर उन्होंने सदैव दीन-दुःखी, न्यायवंचित, दलित-पीडित-शोषित मानवता का पक्ष ही लिया है। परिणामतः उनकी कहानी लेखन में भोगे हुए यथार्थ की प्रामाणिक सच्चाई मिलती है। बचपन में उनको अनेक शारीरिक, मानसिक यातनाओं से गुजरना पड़ा है, फिर भी उनके कलाकार में जो एक विस्मयजनक संतुलन मिलता है, उसका कारण है उन्हें कुमाऊँ प्रदेश की रमणीयता और कमनीयता की विरासत मिली है। इस धरती पार्वती के सौंदर्य ने लेखक को मालामाल कर दिया है। उनकी कहानियों में एक तरफ जहाँ तीव्र आक्रोश और तिक्त कटुता दृष्टिगत होती है वहाँ दूसरी तरफ अपनी जमीन का लगाव भी उन्हें खींचता है। "मेरी तैंतीस कहानियां" की भूमिका में

वे लिखते हैं -"यह मेरी विवशता ही है कि न चाहते हुए भी मुझे आक्रोशपूर्ण कृतियाँ लिखनी पड़ी हैं। अपने दायित्व से मुकर जाने और अपने प्रति पूँजीवादी व्यवस्था तथा पूंजीवादियों के टुकड़खोरों से अन्याय पूर्ण दंशनों को चुपचाप सह लेने की क्षमता मुझमें नहीं हैं। अन्यथा मैं अपनी रचना प्रक्रिया सिर्फ कुमाऊँ खंड की कथाउर्वरा धरती तक ही सीमित रखता। मेरे आत्मिक संस्कार कुमाऊँ खंड की मिट्टी की ओर खींचते हैं, मगर मेरा दायित्वबोध मुझे कहीं अन्यत्र खींच ले जाता है। फिर भी मेरे साहित्य - सृजन की आराधना, धरती-पार्वती के स्वरूप को आँखो में संजोये कथा-सृजन की पूर्व-पीठिका को यज्ञ की स्वस्तिक-चिह्न मंडिता वेदी की तरह संवारने लगता हूँ -- तो ऐसा लगता है कि, एक कथा-बीज जो मैंने कहीं अपने मन की धरती में रोपा था, वह अंकुरा उठा है ---- और अर्तकथाओं की अक्षर-बालियां मेरी लेखनी के माथे झूमने लग गई हैं। और अपने अकिंचन सृजन-श्रम के बदले, अन्नदानों जैसी तृप्ति दामिनी अंखरोटी पाकर, मैं कृत-कृत्य हो उठता हूँ, कुमाऊँ की धरती - पार्वती के चरणों में नमित हो जाता हूँ।"[४२]

शैलेश मटियानी के महान कहानीकार का मूल्यांकन करते हुए राजेन्द्र यादव लिखते हैं --"दरअसल उनकी ज़मीन वही थी जहां से वे निकल भागे थे - यानी वंचितों और दलितों की संघर्ष भरी दुनिया। यहाँ मुझे फुटपाथों और घूरे से उठे हुए तीन लेखकों का अनायास ही घ्यान आ रहा है - गोर्की, जैकलंदन और ज़्यां ज़ेने। बंबई की जिस ज़िंदगी का मटियानी बार-बार जिक्र करते है इन तीनों लेखकों के विश्वविद्यालय भी वही थे। उन्हीं "निचली गहराइयों" ने गोर्की को संघबद्धता की वह वैचारिक ऊर्जा दी जहाँ वह संघर्षशील मानवता के मंत्र द्रष्टा बनकर उभरे। असमानता, सामाजिक अन्याय, शोषण के विरूद्ध लड़ाई, विषमता और अमानवीयता से जूझते हुए लोग। "मां" जैसा उपन्यास। इस यातना और संघर्ष से जुड़कर शायद मटियानी भी दूसरे गोर्की हो सकते थे, हावर्ड फ़ास्ट या स्टीन बैक हो सकते थे। वे जैक लंदन की तरह जंगलों और

समुद्रों के भेड़ियों, बाघों, लुटेरों और जलदस्युओं के खिलाफ़ अपराजेय जिजीविषा की लोमहर्षक कहानियां लिख सकते थे। मटियानी ने भी तो अपने समाज में जंगली भालुओं, सूअरों, बाघों, भेडियों, सांपों और लुटेरों की आपराधिक दुनिया से मुठभेड़े कम नहीं की थी। जिस वर्ण-व्यवस्था, सामाजिक अन्याय और सांस्कृतिक वर्चस्व ने उन्हें ज़िदगी के चालीस लेखकीय वर्षों तक लगातार लतियाया और दुत्कारा उसकी ब्राह्मणवादी सामाजिक बुनावट का विश्लेषण करने के बजाय वे अंततः उसी का समर्थन करने लगे। यह अपनी संवेदना और संघर्ष के साथ विश्वासघात था। सच्चे लेखक की आत्मा को चुप या स्थगित किया जा सकता है, कुचला नहीं जा सकता। वह पलटकर खुद अपने को ही डँसने लगती है। वह बाढ़ की उस धारा की तरह है जो अनजाने और चुपचाप नीचे की धरती को काटती रहती है -- कगार के पूरी तरह ढहने से पहले। (उनका ध्यान शायद ही कभी इस तथ्य की ओर गया हो कि हिंदी के प्रायः सारे कथा-लेखक, श्रीनिवास दास, देवकीनंदन खत्री से लेकर मटियानी - संजीव- उदय प्रकाश तक या तो गैर-ब्राह्मण हैं या स्त्रियां)।''[४३]

इसी संदर्भ में ज्यां ज़ेने के साथ मटियानीजी की तुलना करते हुए यादवजी लिखते हैं कि ज़ेने अनाथ था और उसे अपने मां-बाप तक का पता नहीं था। उसकी सारी शिक्षा चोर, लुटेरों, लफंगों और समलिंगी हत्यारों की संगत में हुई थी। वह जेलों और जुआघरों में बड़ा हुआ। उसने इन्हीं अनुभवों पर एक चोर की बही (ये थीफ्स जर्नल) पुस्तक लिखी। उसने ज़िंदगी का जैसा अतार्किक और भयानक रूप देखा वहाँ उसे अपने और दुनिया के होने का कोई तर्क समझ में नहीं आ रहा था।[४४]

जिन दारूण और नारकीय परिस्थितियों में मटियानीजी रहते आये थे वहाँ उन्हें सुरक्षा और सम्मान दोनो की आवश्यकता थी। परंतु उसके लिए जिस औपचारिक शिक्षा और साधनों की दरकार होती हैं उनका यहाँ अभाव था। सब कुछ खुद उनको ही अर्जित करना था। परम्परागत रूप

MEHTA LIBRARY
UNIVERSITY OF BARODA
University of Baroda

से जो मूल्य, आदर्श और मिथक मिले थे उनके लिए प्रश्नहीन स्वीकृति थी। हथियार सिर्फ दो ही थे - प्रचंड प्रतिभा और कलम-दूसरे शब्दों में अपने खौलते अनुभवों को उत्कृष्ट कहानियों में रूपांतरित कर सकने की लेखकीय दृष्टि। आंचलिक कहानीकार रेणु से तुलना करते हुए यादव जी मटियानी जी के संदर्भ में लिखते हैं-- "हिन्दी में आंचलिकता का आगमन सन् ५४-५५ में रेणु के मैला आंचल के साथ हुआ। मगर मटियानी सन् ५१-५२ से ही अपने पहाड़ी आंचल, वहाँ की बोली-बानी, चरित्र और कथानकों को वैसे ही रूपरंग- गंध- स्वरों के साथ पकड़ रहे थे। खौलते अनुभवों के साथ उनके पास कहानी कहने की कला,लोककथाओं को गुंथने का मुहावरा कहीं भी रेणु से कम नहीं है, बल्कि रेणु में जहाँ कलात्मक तराश (सोफिस्टीकेशन) और मध्यवर्गीय रूमानियत को रास आनेवाली सौंदर्य-चेतना है वहाँ मटियानी में ज़मीनी ऊर्जा और चरित्रों की बीहड़ जीवंतता है। रेणु अज्ञेय से लेकर निर्मल वर्मा तक के पसंदीदा लेखक हैं। उनके पास कोई डिग्री थी या नहीं, मुझे नहीं मालुम लेकिन वे बहु-पठित और बाकायदा प्रशिक्षित लेखक हैं। उधर मटियानी की अशिक्षा ही उन्हें जीवन और ज़मीन की ऊर्जा से जोड़ती है। शिल्प और भाषा के प्रयोग भी मटियानी में कम नहीं है। देखा और भोगा हुआ जीवन तो है ही। उनके पात्र अस्तित्व से जूझते खुरदुरे लोग हैं -- रेणु में भावना और रोमानियत अधिक है। दोनों के पास गहरी मानवीय संवेदना से उपजा नैतिकता बोध है।"[४५]

हिन्दी के वरिष्ठ कथाकार पंकज बिष्ट मटियानीजी के संदर्भ में लिखते हैं -- "इधर राजेन्द्रजी ने मटियानीजी को लेकर एक लेख "राष्ट्रीय सहारा" में लिखा है, जिसमें उन्होंने शैलेशजी की तुलना ज़्यां ज़ेने से की है।[४६] मैं इस बारे में स्पष्टीकरण देना चाहता हूँ। "हंस" में जब मटियानीजी की कहानी "माता" छपी तो मुझे अंदर ही अंदर लगा था कि हिन्दूवाद के कारण मटियानीजी की कहानियां अपनी तेजस्विता खो रही हैं। मेरा इशारा उस कहानी के स्वर पर था जो कि किन्हीं अर्थों में

प्रतिगामी है। एक लड़की का अपने लिए निर्धारित भूमिका - पत्नी और मां - को स्वीकार न कर संन्यासिनी हो जाना यही नहीं कि अपने चुनने के अधिकार का इस्तेमाल है, बल्कि एक तरह से पितृ सत्तात्मक समाज के खिलाफ़ विद्रोह भी है। पर इस कहानी की नायिका संन्यासिन बनने के बाद वापस परिवार में लौट आती है। मुझे कहानी अच्छी नहीं लगी थी। पर इधर मुझे जब उनकी एक बहुत ही मार्मिक कहानी "चौथी मुट्ठी" की याद आई तो मेरी समझ में आया कि नहीं वह तो सदा से ही पारिवारिक मूल्यों के पक्षधर रहे हैं। "चौथी मुट्ठी "में नायिका, जो कि अपने ससुरालवालों से सताई हुई है अपनी सास, ससुर आदि के खिलाफ़ गोल देवता के मंदिर में घात (ईश्वर के दरबार में न्याय की मांग के तहत उनके विनाश की कामना) डालती है तो अपने पति के नाम पर आकर रूक जाती है। मैं कहना यह चाहता हूँ कि मटियानीजी अपने संस्कारों में गहरे नैतिकतावादी और आदर्शवादी सदा से ही रहे हैं जो कि सप्रयत्न अनैतिकता और भ्रष्टाचार से लड़ते हैं। जबकि ज़्यां ज़ेने के अंदर ऐसा कोई नैतिक बंधन नहीं है। वह अ-नैतिक, जिसे अंग्रजी में अर्मारल कहते हैं। असल में मटियानीजी के अंदर की ज़िद उसी नैतिकता या आदर्शवादिता का परिणाम है जो उन्होंने अपने संस्कारों में हिन्दू होने के नाते पाई है। उनकी सीमा यह है कि वह इन्हीं मूल्यों को चरम मानकर चले और इनसे सप्रयास मुक्त होने की जगह, ज्यों-ज्यों अकेले पड़ते गए और अधिक रूढ़ होते गए।"[४७]

इसी संदर्भ में मटियानी जी का मूल्यांकन करते हुए पंकजबिष्ट आगे कहते हैं कि यदि उनको इस तरह से अकेला नहीं किया जाता तो पूरी संभावना थी कि वह एक ऐसे क्रान्तिकारी लेखक के रूप में उभरते जो हिन्दी साहित्य में प्रेमचंद से ऊपर नहीं तो उनके समकक्ष अवश्य होता। यह बात के सबसे महत्त्वपूर्ण कथाकार है। [४८]

ज़्यां ज़ेने की रचनात्मक सृष्टि और मटियानी की लगभग ३०-४० प्रतिशत रचनात्मक सृष्टि में साम्य होते हुए भी एक बड़ा अंतर यह है कि ज़्यां ज़ेने समाज के नैतिक सांस्कृतिक जीवन मूल्यों को नकारता है वहाँ

मटियानी में कहीं गहरे इन मूल्यों के प्रति आकर्षण है। ज़्यां ज़ेने को तो अपने मां - बाप का भी पता नहीं था अतः जातिभिमान या कुलाभिमान की तो बात ही नहीं आती। पर फिर भी यदि मटियानीजी के कथाकार का मूल्यांकन करते हुए हिन्दी कथा समीक्षक यदि उनकी तुलना गोर्की, ज़्यां ज़ेने, जैकलंदन प्रेमचन्द या रेणु से करते हैं, तो इससे एक बात तो स्पष्ट होती है कि यह एक बड़े माद्दे का कथाकार, जीनियस कथाकार अवश्य है। राजेन्द्र यादव ने ही एक बार कहीं कहा था कि शैलेश की कुछ कहानियों के सामने मैं अपना समूचा कृतित्व न्यौछावर करने को तैयार हूँ। मटियानीजी की कहानियों में प्रेतमुक्ति, पापमुक्ति, सुहागिन, मिट्टी, मैमुद, मिसेज़ ग्रीनवुड़, कठफोड़वा, घुघुतिया त्यौहार, लाटी, नंगा, कालिका अवतार, रमौती, चील, दो दुःखों का एक सुख, एक कप चा : दो खारी बिस्किट, चिथड़े, हारा हुआ, इब्बूलंग, अर्द्धांगिनी, गोपुलीगफूरन, छाक, एक शब्दहीन नदी, महाभोज, भविष्य, सफर पर जाने से पहले, रहमतुल्ला आदि कहानियों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। उनकी कहानियों में मिट्टी और मानवीय मूल्यों की महक सर्वोपरि है। इतना सशक्त लेखक यदि दलित जातियों को मिलता तो मराठी और गुजराती की भाँति हिन्दी का दलित साहित्य भी सर्वोच्य शिखर पर होता। दलित साहित्य के जातिगत आधार को यदि कुछ समय के लिए दरकिनार किया जाय और मटियानीजी की दलित जीवन पर आधारित कहानियों को केन्द्र में रखा जाय तो प्रतीत हुए बिना नहीं रहता कि उनका यह प्रदान इस क्षेत्रमें नगण्य नहीं है। दलित जीवन के परागत अनुभवों के साथ यदि उनके पास आंबेडकरवादी दृष्टिकोण होता तो कदाचित उनके कथाकार को एक नया आयाम मिलता।

निष्कर्ष :---

हमारे शोध-प्रबंध का विषय है --“प्रेमचन्द तथा शैलेश मटियानी की कहानियों में निरूपित दलित जीवन का चित्रण।” अतः “विषय प्रवेश”के इस प्रथम अध्याय में हमने अपने विषय से सम्बद्ध कुछेक ऐसे मुद्दे को लिया है जिनसे शोध-प्रबंध की पृष्ठभूमि निर्माण होता है। प्रस्तुत अध्याय के समाकलन द्वारा हम निम्नलिखित निष्कर्षों तक सहजता पहुँच सकते हैं : -

(१) यद्यपि कहानी प्राचीनकाल से उपलब्ध होती हैं, तथापि आधुनिक कहानी अपने वस्तु और शिल्प में उस प्राचीन कहानी से अलग पड़ती है।

(२) प्राचीनकथा जहाँ स्थूल तथा कथावस्तु प्रधान, मनोरंजन प्रधान, बोधप्रधान तथा कथासूत्रों पर आधारित थी; वहाँ आधुनिक कहानी अधिक सूक्ष्म, चरित्र-चित्रण प्रधान, परिवेश प्रधान तथा जीवन के प्राणप्रश्नों से संपृक्त है।

(३) दलित-जीवन से तात्पर्य यहाँ उन जातियों के जीवन से है जिनका सामाजिक-आर्थिक-नैतिक शोषण किया गया है। ऐसी जातियों में विशेषतः अनुसूचित जातियाँ तथा अनुसूचित जनजातियाँ आती हैं।

(४) उपन्यास और कहानी उभय कथासाहित्य के प्रकार है, किन्तु दोनों में तत्वतः अंतर है। जहाँ कहानीकार की दृष्टि को हम “अर्जुन दृष्टि” कह सकते है वहाँ उपन्यासकार की दृष्टि “भीम दृष्टि” होती है।

(५) हिन्दी कहानी का प्रारंभ २० वीं शताब्दि के प्रारंभ से होता है। किन्तु हिन्दी कहानी का समुचित विकास प्रेमचन्दयुग से माना जाता है।

(६) प्रेमचन्दयुग की कहानी , प्रेमचन्दोत्तर कहानी स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी आदि शीर्षकों के अंतर्गत हिन्दी कहानी के विकास को लक्षित किया गया है। प्रेमचन्दोत्तर कहानी के विकास- सोपानों में नई कहानी तथा समकालीन कहानी के अभिलक्षणों को भी चिह्नित किया गया है।

(७) प्रेमचन्द के कहानीगत योगदान को लक्षित करते हुए उनकी लगभग २२४ कहानियों की सूची प्रस्तुत की गई है। प्रेमचन्द की प्रथम कहानी सन् १९०७ में प्रकाशित हुई थी, अतः १९०७ से लेकर सन् १९३७ तक ही उनकी कहानियों का लेखा-जोखा यहाँ प्रस्तुत है।

(८) प्रेमचन्द में हमें मुख्यतया मानवतावादी चेतना मिलती है। फलतः उनमें नारी विमर्श, दलित विमर्श, सामाजिक न्याय विमर्श तथा हिन्दू - मुस्लिम ऐक्य विमर्श जैसे महत्वपूर्ण प्रश्न हमें उपलब्ध होते हैं। प्रेमचन्द ने हिन्दी कहानी साहित्य को उस ऊँचाई तक पहुँचाया है जहाँ से हम गोर्की, मोपांसा, चेखव जैसे विश्वविख्यात कहानीकार के कृतित्व को झांक सकते हैं। उन्होंने हिन्दी कहानी साहित्य को एक नई सौंदर्य दृष्टि प्रदान की।

(९) शैलेश मटियानी हमारे दूसरे विवेच्य कहानीकार हैं। हिन्दी के कहानी साहित्य के आलोचक उनको प्रेमचन्द के कद का कहानीकार मानते हैं।

(१०) मटियानीजी की हिन्दी के एक महान और सशक्त कहानीकार होते हुए भी उनके जीवनकाल में उनकी बड़ी उपेक्षा हुई है। हिन्दी कहानी के सुप्रसिद्ध आलोचक राजेन्द्र यादव, शैलेश मटियानी की चर्चा करते हुए गोर्की, जैकलंदन और ज़्यां ज़ेने जैसे विश्वप्रसिद्ध कहानीकारों से उनकी तुलना करते हैं।

(११) दलित जीवन से सम्बद्ध उनकी जो कहानियां है उनमें विशुद्ध मानवीय स्पर्श और भावनाओं का आकलन हुआ है। उनके इस प्रदान को नकारा नहीं जा सकता।

: संदर्भानुक्रम :

(१) उधृत द्वारा : डॉ. गुलाबराय : काव्य के रूप : पृ.१९५

(२) उधृत द्वारा : डॉ. गुलाबराय : काव्य के रूप : पृ.१९६

(३) द्रष्टव्य : हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं.डॉ.नगेन्द्र : पृ.४७४- ४७५

(४) हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंन्द्र शुक्ल : पृ.
(५) द्रष्टव्य : हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. डॉ. नगेन्द्र : पृ. ५१४
तथा "काव्य के रूप": डॉ. गुलाबराय : पृ. २०७
(६) द्रष्टव्य : हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. डॉ. नगेन्द्र : पृ. ५१४
(७) द्रष्टव्य : काव्य के रूप : डॉ. गुलाबराय : पृ. २०७
(८) हिन्दी साहित्य का इतिहास : डॉ. नगेन्द्र : पृ. ५१४
(९) द्रष्टव्य : वही : पृ.५१४
(१०) वही : पृ.५१४
(११) द्रष्टव्य : वही : पृ.५१४
(१२) द्रष्टव्य : काव्य के रूप : पृ. २०८
(१३) हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. डॉ. नगेन्द्र : पृ. ५१५
(१४) युग निर्माता प्रेमचन्द तथा कुछ अन्य निबंध :डॉ. पारूकांत देसाई : पृ. ७०
(१५) काव्य के रूप : पृ. २०८
(१६) बिजली के फूल : डॉ. पारूकांत देसाई : पृ.
(१७) अलग- अलग वैतरणी : डॉ. शिवप्रसाद सिंह : पृ. ६८५ - ६८६
(१८) Aristic culture and cultural colloborotion :
Artistic art life : P - 127
(१९) स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : सं. डॉ. रामकुमार गुप्त : लेख :
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : डॉ. रमेश पंडया : पृ. २६
(२०) द्रष्टव्य : बृहद् साहित्यिक निबंध : सं. डॉ.यश गुलाटी : निबंध :
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : डॉ. पुष्पपाल सिंह : पृ. २७१
(२१) द्रष्टव्य : वही : पृ.२७२ - २७३
(२२) द्रष्टव्य : वही : पृ.२७३
(२३) "हिन्दी कहानी : फिलहाल ": डॉ. चंद्रभान रावत : नई कहानी की
भूमिका : कमलेश्वर : पृ. ११
(२४) द्रष्टव्य : बृहद् साहित्यिक निबंध : सं. यश गुलाटी : लेख :
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : डॉ. पुष्पपाल सिंह : पृ. २७६

(२५) वही : २७६

(२६) द्रष्टव्य : युग निर्माता प्रेमचन्द तथा कुछ अन्य निबंध : डॉ. पारूकांत देसाई : पृ. १२-१३-१८

(२७) Life and works of premachand : Dr.Manohar bandopadhyan:P-22

(२८) Ibid : PP- 22 - 23

(२९) Ibid : PP- 24

(३०) Ibid : PP- 25

(३१) Ibid : PP- 29

(३२) द्रष्टव्य : कलम का सिपाही : अमृतराय : पृ. ६५७ - ६६४

(३३) द्रष्टव्य : वही : पृ. ६५७ -६६४

(३४) कलम का सिपाही : पृ. ५३०

(३५) भूमिका : मेरी तैंतीस कहानियां : शैलेश मटियानी : पृ. २-३

(३६) वही : पृ.३

(३७) मेरी तैंतीस कहानियां : भूमिका : पृ. २५

(३८) अहिंसा तथा अन्य कहानियां : फ्लेप पर प्रकाशित वक्तव्य

(३९) वही

(४०) भूमिका : बर्फ की चट्टानें (बड़ा संस्करण) : शैलेश मटियानी : पृ.१३

(४१) वही : पृ.९

(४२) भूमिका : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ. २

(४३) हंस : जून २००१ : पृ. ११

(४४) द्रष्टव्य : वही : पृ.११

(४५) वही : पृ.१२

(४६) यह "राष्ट्रीय सहारा" वाली बात यादवाजी ने जून २००१ के हंस के अपने संपादकीय "मेरी तेरी उसकी बात" में भी लिखी है ।

(४७) हंस : जून २००१ : पृ. २५

(४८) द्रष्टव्य : वही : पृ.२५